होली विशेषांक

संत श्री आसारामजी आश्रम
द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ७
अंक : ५१

मार्च : १९९७

जहरीले रंगों की जगह हम हितकर रंग व हरिनाम के रंग में रंगें-रंगायें । छोटे-बड़े, मेरे-तेरे के भेदभाव को भूलकर सभी में उसी एक सत्यस्वरूप परमात्मा को निहारकर अपना जीवन धन्य बनाने के मार्ग पर अग्रसर हों ।

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

नवजवान भारत की शान
भाग : १ से ३
विद्यार्थियों के लिए विशेष

आप ही के लिए-भाग : १ और २
कोई गधा कह दे तो जितनी ग्लानि होती है
उतना रामनाम सुनने से आनन्द नहीं आता।

पूज्य बापू की जीवन-उद्धारक, दिव्य चेतना का संचार करनेवाली ऑडियो कैसेट्स

अष्टावक्र कथा
जो शरीर के चमड़े को देखते हैं वे चमार हैं।
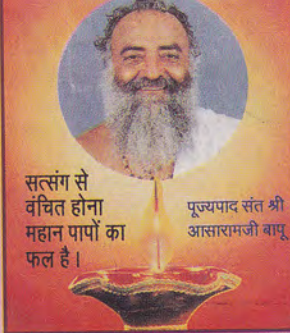
नई ऑडियो कैसेट्स
गीता-भागवत सत्संग भाग : १ से १०

एक क्षण में सब मुक्त हो सकते हैं
लेकिन अपनी मान्यता छोडें तब...

सद्गुरु पार उतारणहार भाग : १, २
जिसको समर्थ गुरु में श्रद्धा नहीं वह कब
मुसीबत में आ जाय यह कहना कठिन है।

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ७
अंक : ५१
९ मार्च १९९७

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५
फोन : (०७९) ७४८६३१०, ७४८६७०२.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा,
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५ ने
विनय प्रिन्टिंग प्रेस, मीठाखली, अहमदाबाद, पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अहमदाबाद में छपाकर प्रकाशित किया।

हे देवाधिदेव महादेव !
जो कुछ किया अच्छा किया, अब तो न होली खेलिये।
सामीप्य अपना दीजिये, नाहीं नरक में ढेलिये॥
कच्चे उड़ा सब रंग पक्के रंग में रंग दीजिये।
पिचकारी देकर ज्ञान की अज्ञान तम हर लीजिये॥
- भोले बाबा

प्रस्तुत है...

१. गीता-अमृत ... २
वास्तविक सुख किसमें ?
२. पर्वमांगल्य ... ७
'होली' अर्थात् हो... ली...
३. परमहंसों का प्रसाद ... १०
४. साधना-प्रकाश ... १३
नियम में निष्ठा
५. तत्त्वदर्शन ... १५
सेवा कर निर्बन्ध की...
६. प्रेरक प्रसंग ... १७
महाराजजी के आशीर्वाद
७. साधना-पथ ... १९
कुप्रचार से हानि संतों को नहीं, समाज को है...
८. कथा-अमृत ... २१
कर खिजमत फकीरों की...
९. जीवनपाथेय ... २४
श्रद्धा सब धर्मों में जरूरी
१०. युवाजागृति संदेश ... २७
'राजा नहीं, राजाओं का गुरु होगा...
११. शरीर-स्वास्थ्य ... २८
★ दहीं
★ विभिन्न रोगों में उपचार
★ ईख
★ पायरिया
★ दाँत के लिए विशेष प्रयोग
१२. काव्य-गुँजन ... ३०
तेरे चाहनेवालों को ही चाहा करूँ...
१३. संस्था समाचार ... ३१

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

वास्तविक सुख किसमें ?

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्त: परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥

'निरंतर मुझमें मन लगानेवाले और मुझमें ही प्राणों को अर्पण करनेवाले भक्तजन, सदा ही मेरी भक्ति की चर्चा के द्वारा, आपस में मेरे प्रभाव सहित मेरा कथन करते हुए संतुष्ट होते हैं और मुझ वासुदेव में ही निरंतर रमण करते हैं ।'

(भगवद्गीता : १०.९)

> *भोगी को विषय-भोगों में वह सुख नहीं मिलता जो भक्त को भगवद्प्रभाव के चिंतन एवं परस्पर कथन में मिलता है ।*

भोगी को विषय-भोगों में वह सुख नहीं मिलता जो भक्त को भगवद्प्रभाव के चिंतन एवं परस्पर कथन में मिलता है ।

वस्तु-व्यक्तियों से क्रिया करके जो सुख मिलता है उसे क्रियाजन्य सुख कहते हैं । सूँघने, चखने, स्पर्श करने आदि क्रियाजन्य सुख में ही मनुष्य अटका रहा तो **मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति ।** वह मनुष्य के रूप में पशु माना गया है । क्रियाजन्य सुख तो कुत्ते-कुत्ती भी भोगते हैं, जिसमें क्रिया, परिश्रम तो ज्यादा होता है और सुख घड़ीभर का मिलता है । ऐसे ही खाने-पीने, सूँघने-सुनने आदि से मिलनेवाला सुख क्रियाजन्य सुख है ।

> *क्रियाजन्य सुख तो पशु भी ले रहे हैं, मूर्ख भी ले रहे हैं । भावजन्य सुख भक्त लेते हैं और विचारजन्य सुख भक्त और ज्ञानी लेते हैं ।*

दूसरा सुख है भावजन्य सुख । क्रियाजन्य सुख की अपेक्षा भावजन्य सुख में मेहनत कम है और सुख ज्यादा है । भगवान या गुरु की मूर्ति को निहारने से या मन में भावना करने से हृदय में सुख मिलता है । भावजन्य सुख में परिश्रम कम है और सुख क्रियाजन्य सुख से ज्यादा है ।

भावजन्य सुख हृदय को शुद्ध करता है स्वतंत्रता की ओर ले जाता है । क्रियाजन्य सुख में बल-बुद्धि तेज-तन्दुरुस्ती का नाश होता है और भावजन्य सुख हृदय को भगवद्भाव से भरता है ।

भावजन्य सुख से भी बढ़कर है ध्यानजन्य सुख । भाव ज्यादा देर नहीं टिकता लेकिन ध्यान उससे ज्यादा देर टिकता है । हालाँकि ध्यान भी निरंतर नहीं होता है और समाधि भी सतत नहीं होती है । अत: उससे भी आगे है विचारजन्य सुख ।

विचारजन्य सुख अर्थात् भगवद्विचार करना, भगवद्ज्ञान की, आत्मज्ञान की बातें करना । जब दो दीवाने मिल जाते हैं तो वहाँ ईश्वर विषयक चर्चा की मेहफिल शुरू हो जाती है जिससे मन भगवदाकार, ब्रह्माकार होने लगता है । ऐसा करते-करते मनुष्य तात्त्विक सुख का अधिकारी होने लगता है । आत्म-साक्षात्कारी महापुरुष तात्त्विक सुख को पाते हैं ।

सदा समाधि संत की आठों प्रहर आनंद ।
अकलमता कोई ऊपजा गिने इन्द्र को रंक ॥

ऐसा माधुर्य, संतोष और ऐसा रस उन महापुरुष को मिलने लगता है जहाँ इन्द्र का सुख भी तुच्छ हो जाता है ।

मनुष्य जन्म का लक्ष्य उसी रस को, उसी तात्त्विक सुख को पाना है । क्रियाजन्य सुख तो पशु भी ले रहे हैं, मूर्ख भी ले रहे हैं । भावजन्य सुख भक्त लेते हैं और विचारजन्य सुख भक्त और ज्ञानी लेते हैं । तत्त्व का सुख पाने के लिए परस्पर परमात्मतत्त्व

का कथन-चिंतन-मनन करना चाहिए ।

बुद्धिमान मनुष्य तो वह है जो भगवद्‌चिंतन, भगवद्स्वरूप का श्रवण करे कि 'भगवान क्या हैं ? जीवात्मा क्या है ? परमात्मा क्या है ? सुख-दुःख आते हैं, चले जाते हैं लेकिन उनको भी जो देखनेवाला है उस साक्षीस्वरूप में मैं कैसे टिकूँ ? इससे भी आगे चलकर साक्षी और साक्ष्य के पार परमात्मपद में पूर्णता कैसे पाऊँ ?' ऐसा विचार करनेवाला व्यक्ति उस परम सुख को पाता है, तात्त्विक सुख को पाता है ।

छः व्यक्तियों से हमें कभी हानि नहीं होती, वरन् लाभ ही होता है : (१) सात्त्विक एवं बुद्धिमान मित्र (२) विद्वान पुत्र (३)पतिव्रता स्त्री (४) दयालु मालिक (५) सोच-समझकर बोलनेवाला (६) सोच-समझकर काम करनेवाला ।

छः व्यक्तियों से हमें कभी हानि नहीं होती, लाभ ही लाभ होता है :

(१) सात्त्विक एवं बुद्धिमान मित्र (२) विद्वान पुत्र (३) पतिव्रता स्त्री (४) दयालु मालिक (५) सोच-समझकर बोलनेवाला (६) सोच-समझकर काम करनेवाला । इनसे कभी हानि नहीं होती है ।

श्रीकृष्ण अथवा श्रीकृष्णतत्त्व को पाये हुए महापुरुषों को हम 'साधु' कहते हैं । गुरुवाणी में आता है :

साधु ते होवहि न कारज हानि ।
ब्रह्मज्ञानी ते कछु बुरा न भया ॥

जिन्होंने तात्त्विक सुख पा लिया है, परम सुख पा लिया है, आत्मा का सुख पा लिया है उनसे कभी हमारा बुरा नहीं होता है । ऐसे तत्त्ववेत्ता होने के लिए जो दीवाने चल पड़ते हैं, उनकी ही बात भगवान यहाँ कह रहे हैं : **मच्चिता मद्गतप्राणाः।**

निष्ठा को दृढ़ करने के लिए भी उस आत्मा की बातें, सत्संग की बातें करनी चाहिए और उसीमें संतुष्ट होना चाहिए ।

परमेश्वर की ही बातों के परस्पर कथन से ज्ञान पुष्ट होता है, तात्त्विक सुख दृढ़ होता है । जिज्ञासु द्वारा ईश्वर विषयक ज्ञान सुनने से जिज्ञासा की पूर्ति तो होती है, आत्मज्ञान सुनकर कुछ संतोष तो होता है किन्तु उससे सब दुःख नहीं मिटते । सत्संग से कुछ दुःखों की निवृत्ति अवश्य होती है किन्तु बाकी के दुःख मिटाने के लिए उस सत्संग से जो ज्ञान मिला, उस ज्ञान का परस्पर कथन करके उस ज्ञान में टिकने का प्रयास करना चाहिए ।

जब तक गुरु का ज्ञान नहीं मिला था, गुरुदीक्षा नहीं मिली थी तब तक संसार की छोटी-छोटी बातें भी बड़ा प्रभाव डालती थीं लेकिन गुरुदीक्षा मिलने के बाद, सत्संग सुनने के बाद उनका पहले जैसा प्रभाव तो नहीं पड़ता किन्तु दुःख बना रहता है, विक्षेप बना रहता है । निगुरे को ज्यादा तो सगुरे को कम । ...और यह विक्षेप तब तक बना रहता है जब तक आत्मनिष्ठा दृढ नहीं हुई । इसलिए निष्ठा को दृढ़ करने के लिए भी आत्मा की बातें, सत्संग की बातें करनी चाहिए और उसीमें संतुष्ट होना चाहिए । इधर-उधर की बातें करके अपने चित्त से सत्संग की बातों का प्रभाव घटने नहीं देना चाहिए अपितु सत्संग की बातों से इधर-उधर की बातों के प्रभाव को हटा देना चाहिए ।

अगर चारों तरफ से मुसीबतें आ जायें, चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा दिखने लगे, तब भी यह चिंतन करना चाहिए कि : 'दुःख आये हैं तो जाएँगे, सदा नहीं रहेंगे । जब सृष्टि पहले नहीं थी, बाद में भी नहीं रहेगी और अभी भी 'नहीं' की ओर ही जा रही है तो दुःख भी पहले नहीं था, बाद में नहीं रहेगा और अभी भी 'नहीं' की ओर ही जा रहा है । परमात्मा तो पहले भी था, अब भी है और बाद में भी रहेगा । वही परमात्मा मेरा आत्मा है, वही श्रीराम है, वही यशोदानंदन श्रीकृष्ण है और वही गुरु है ।' ऐसा चिंतन करके दुःख के बीच भी आप दो मिनट के लिए पूरे सुख में आ सकते हैं ।

बाहर से तो दुःख, दुःख ही दिखता है लेकिन

दुःख दिखता है दुःखाकार वृत्ति से । उस दुःखाकार वृत्ति को यदि दो मिनट के लिए भी भगवदाकार वृत्ति बना दें तो आप दो मिनट के लिए निर्दुःख हो सकते हैं । जब दो मिनट निर्दुःख हो सकते हैं तो दस मिनट भी हो सकते हैं और दस घण्टे भी हो सकते हैं । हृदय में जब दुःखाकार वृत्ति होती है तब दुःख होता है । **अनुकूलवेदनीयं सुखं प्रतिकूलवेदनीयं दुःखम्** । जो अनुकूल लगता है उसे हम सुख मानते हैं और प्रतिकूल लगता है उसे दुःख मानते हैं । जैसे बेटे की शादी में माँ को गालियाँ मिलती हैं तो उसे दुःख नहीं होता है । दुश्मन का आशीर्वाद भी खटकता है और सज्जन की गाली भी अच्छी लगती है । गाली तो गाली होती है लेकिन वहाँ दुःखाकार वृत्ति उत्पन्न नहीं होती वरन् 'मित्र की गाली है' ऐसा सोचकर सुखाकार वृत्ति बनने के कारण सुख होता है ।

जो अनुकूल लगता है उसे हम सुख मानते हैं और प्रतिकूल लगता है उसे दुःख मानते हैं ।

धन चले जाने से सबको दुःख होता है लेकिन वही धन जब सत्कर्म में लगाते हैं तो अंदर से औदार्य की वृत्ति उत्पन्न होती है । अतः धन देते समय भी सुख होता है । नहीं तो धन देना अच्छा लगता है क्या ? कुछ भी न मिले और धन देना पड़े तो...? फिर भी सत्कर्म में धन देने पर सुख होता है क्योंकि वहाँ धन का महत्त्व नहीं है वरन् आपकी वृत्ति सुखाकार होती है इसीलिए आप मठ-मंदिर, आश्रम आदि में धन अर्पण करते हो । वही पचास रूपये हैं- यदि सत्कर्म में लगाते हो तो सुख होता है और दण्ड के रूप में भरना पड़े तो दुःख होता है ।

मदालसा जब अपने बेटों को दूध पिलाती, तब ब्रह्मज्ञान की बातें करती थी । **मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्** । मानो, गीता का यह वचन चरितार्थ कर रही हो । इस प्रकार शैशव से ही भगवद्भाव के विचारों से ओतप्रोत बातें करके उसने अपने बच्चों को ब्रह्मज्ञानी बना दिया ।

मदालसा जब अपने बेटों को दूध पिलाती, तब ब्रह्मज्ञान की बातें करती थी । शैशव से ही भगवद्भाव के विचारों से ओतप्रोत बातें करके उसने अपने बच्चों को ब्रह्मज्ञानी बना दिया ।

बाल्यकाल में ही एक के बाद एक बालक ब्रह्मज्ञानी होकर विरक्त होने लगा । तब मदालसा के पति ने उससे कहा : ''यदि सभी बच्चों को तुम इस प्रकार विरक्त बना दोगी तो मेरी गादी कौन संभालेगा ? राजगादी संभालने के लिए कुछ तो आसक्ति चाहिए, कुछ तो अज्ञान चाहिए... तभी वह संभाली जा सकेगी । विरक्त क्या संभालेगा ? अतः एक बालक को तो अज्ञानी रखो ।'

अलर्क नामक छोटे बेटे को ब्रह्मज्ञान देने से राजा ने मदालसा को इन्कार कर दिया । मदालसा ने सोचा कि : 'चलो, भले यह अलर्क राज्य संभाले लेकिन मेरा बेटा राज्य करके अंत में मरे और फिर दुबारा जन्म ले तो मेरा जन्म देना व्यर्थ है ।' अतः उसे ब्रह्मज्ञान के थोड़े संस्कार तो दिये ही, जाते-जाते एक ताबीज भी दे गयी और बोली :

''बेटा ! यह ताबीज कभी खोलना मत । जब चारों तरफ से अंधेरा नजर आने लगे, चारों ओर से मुसीबतों के पहाड़ टूटने लगें, तभी इस ताबीज को खोलना ।''

''बेटा ! यह ताबीज कभी खोलना मत । जब चारों तरफ से अंधेरा नजर आने लगे, चारों ओर से मुसीबतों के पहाड़ टूटने लगें, तभी इस ताबीज को खोलना ।''

समय पाकर मदालसा और उसके पति का देहान्त हो गया और अलर्क राज-काज संभालने लगा । ऐसा कोई राजा नहीं, जिसके जीवन में कभी कोई दुःख न आया हो । ज्यों-ही राज्य को 'मेरा' माना, आसक्ति हुई त्यों-ही दुःख आना शुरू हो जाता है । यह ईश्वर की

नियति है ।

जहाँ तुमने वस्तुओं में, व्यक्ति में, परिस्थिति में आसक्ति की कि 'हाश ! अब मजे से जियेंगे' तभी कोई-न-कोई दुःख आना शुरू हो जायेगा क्योंकि परमात्मा तुम्हें सदैव इस मिथ्या मजे में ही नहीं रखना चाहते हैं । इसीलिए दुःखहारी श्रीहरि दुःख देकर भी तुम्हें परिपक्व करना चाहते हैं । यदि आप 'वेल सेट' हो गये तो समझो कि 'अपसेट' होने का सामान भी तैयार हो रहा है और यह कहानी केवल एक-दो की ही हो ऐसी बात नहीं है, सबकी यही कहानी है ।

परमात्मा तुम्हें सदैव इस मिथ्या मजे में ही नहीं रखना चाहते हैं इसीलिए दुःखहारी श्रीहरि दुःख देकर भी तुम्हें परिपक्व करना चाहते हैं ।

अलर्क भी राज-काज संभालते-संभालते उसमें ही गरकाव होने लगा तब उसके भाइयों को हुआ कि 'हमारा भाई अज्ञानी क्यों रह जाए ? अब वह राज्य में आसक्त होता जा रहा है अतः उसकी आसक्ति छुड़ाने का उपाय भी करना होगा ।'

वे जीवन्मुक्त भाई गये अलर्क के पास और बोले : ''हमें हमारा राज्य का हिस्सा दे दो ।''

जितना संसार से सुख मिलता है उतनी ही उससे आसक्ति भी होती है ।

अलर्क : ''राज्य मुझे मिला है, आप लोगों को कैसे दे दूँ ?''

भाई : ''हम तुम्हारे भाई लगते हैं, अपना हक क्यों छोड़ें ?''

जितना संसार से सुख मिलता है उतनी ही उससे आसक्ति भी होती है । अलर्क ने राज्य देने से इन्कार कर दिया । तब उसके भाइयों ने काशीनरेश से विचार-विमर्श किया कि 'हमें अपने भाई को जगाना है, उसे मुसीबत में डालकर सदा के लिए जन्म-मरणरूपी मुसीबत से छुटकारा दिलवाना है । अतः आप हमारी सहायता करें ।' काशीनरेश ने अपना सैन्य भेज दिया ।

''तू मदालसा का बेटा होकर दुःखी है ? मैं अभी तेरा दुःख निकाल देता हूँ । बता, कहाँ है दुःख ?''

अलर्क का राज्य तो छोटा-सा था और काशीनरेश की विशाल सेना । अलर्क को हुआ कि 'इतनी बड़ी सेना लेकर आये हुए अपने संत भाइयों से मैं कैसे लड़ूँगा ? वह बड़ा दुःखी और चिंतित हो उठा और ऐसी मुसीबत के समय में उसने माँ का दिया हुआ ताबीज खोला जिसमें एक छोटी चिट्ठी थी । उस चिट्ठी में लिखा था :

दुःख पड़े तो संतशरण जाइए ।

उस समय नगर के बाहर जोगी गोरखनाथ ठहरे हुए थे । अलर्क पहुँचा जोगी गोरखनाथ के श्रीचरणों में और बोला : ''महाराज ! मैं बड़ा दुःखी हूँ ।''

गोरखनाथ : ''तू मदालसा का बेटा होकर दुःखी है ? मैं अभी तेरा दुःख निकाल देता हूँ । बता, कहाँ है दुःख ?''

अलर्क : ''महाराज ! हृदय में बड़ा दुःख है ।''

जोगी गोरखनाथ ने तपाया चिमटा और बोले : ''बता, कहाँ है दुःख ? अभी उसे यह चिमटा लगाता हूँ ।''

अलर्क : ''महाराज ! आप चिमटा मेरे दुःख को कैसे लगाओगे ?''

गोरखनाथ : ''दुःख है कहाँ ?''

अलर्क : ''भीतर है ।''

गोरखनाथ : ''चल, अभी लगाता हूँ ।''

अलर्क : ''महाराज ! यह क्या ? चिमटे से दुःख दूर कैसे होगा ?''

गोरखनाथ : ''तू केवल बता कि दुःख भीतर कहाँ पर है और कैसे है ? दुःख है कि दुःख का भाव है ?''

अलर्क : ''महाराज ! भाई लोग काशीनरेश की सेना लेकर राज्य पर चढ़ाई करने आये हैं, इसलिए मन में दुःख का भाव है ।''

गोरखनाथ : ''यह दुःख नहीं है, वरन् 'यह राज्य जाये नहीं' इस आसक्ति के कारण दुःखाकार वृत्ति

है । इस दु:खाकार वृत्ति को तू बदलना चाहे तो बदल सकता है । यह केवल एक वृत्ति है और वृत्ति जहाँ से उत्पन्न होती है वह उत्पन्न करनेवाला पूर्ण स्वतंत्र है । उसे जान ले तो सब दु:खों से सदा के लिए मुक्त हो जायेगा ।''

''महाराज ! उसे कैसे जानूँ ?''

''अलर्क ! संसार तू लाया नहीं था, राज्य तू लाया नहीं था, ले भी नहीं जायेगा और अभी भी नहीं के तरफ ही जा रहा है । उसमें आसक्ति मत कर ।''

इस प्रकार परस्पर आत्मबोध की बात सुनते-सुनते अलर्क को अनुभव होने लगा ।

मच्चित्ता मद्गतप्राणा
बोधयन्तः परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं
तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥

अलर्क को उस तात्त्विक सुख का अनुभव हुआ जो उसे राज्य-भोग में कभी नहीं मिला था । राज्य-सुख तो क्रियाजन्य सुख था, कभी-कभार पूजा में भावजन्य सुख मिला था किन्तु यह सुख तात्त्विक सुख था । तात्त्विक सुख ही सब सुखों का मूल है ।

''दु:खाकार वृत्ति को तू बदलना चाहे तो बदल सकता है । यह केवल एक वृत्ति है और वृत्ति जहाँ से उत्पन्न होती है वह उत्पन्न करनेवाला पूर्ण स्वतंत्र है । उसे जान ले तो सब दु:खों से सदा के लिए मुक्त हो जायेगा ।''

कृतकृत्य होकर अलर्क ने गुरु गोरखनाथ के चरणों में प्रणाम करके विदा माँगी और राज्य में जाकर अपने भाइयों को संदेश भिजवाया : ''आज तक मैंने यह राज्यरूपी बैलगाड़ी खूब खींची । आप लोग मेरे बड़े भाई हैं अत: इस झंझट को अब आप ही संभाल लें । अब मैं राज्य से निवृत्त हो जाना चाहता हूँ ।''

तब भाइयों ने कहा : ''पागल ! इस झंझट को झंझट समझकर निवृत्ति का सुख तुझे मिल जाये इसीलिए हमने यह आयोजन किया था । बस, अब तू ही इसे संभाल । हमें इसकी जरूरत नहीं है । राज्य के प्रति तेरी आसक्ति एवं तेरी नासमझी को मिटाने के लिए ही हमने यह सारा स्वाँग रचा था ।''

ऐसे ही परमात्मा तुम्हारे साथ स्वाँग रचता है । परमात्मा परम सुहृद है । वह जो भी करता है हमारे मंगल के लिए ही करता है । हम हार न जाएँ, घबरा न जायें, थक न जायें और तुच्छ सुख-दु:ख में बह न जाएँ- केवल इतनी ही सावधानी रखें और यह सावधानी तब आयेगी जब भगवान के प्यारों के बीच जायेंगे, उनसे भगवद्संबंधी वार्तालाप सुनेंगे, भगवद्विचार का मनन-चिंतन करेंगे एवं बार-बार भगवदाकार वृत्ति उत्पन्न करेंगे... ऐसा करने से उन परम सुहृद परमात्मा में रमण करने की योग्यता अपने-आप विकसित हो उठेगी । इसीलिए भगवान ने कहा है : **मच्चित्ता मद्गतप्राणा...**

'निरंतर मुझमें मन लगानेवाले और मुझमें ही प्राणों को अर्पण करनेवाले भक्तजन, सदा ही मेरी भक्ति की चर्चा के द्वारा, आपस में मेरे प्रभाव को जानते हुए तथा गुण और प्रभाव सहित मेरा कथन करते हुए संतुष्ट होते हैं और मुझ वासुदेव में ही निरंतर रमण करते हैं ।'

❀

(पृष्ठ १८ का शेष)

वह चूहा पतला होने पर ही बाहर निकल सकता है, ऐसे ही भोग भोगकर जो बुद्धि स्थूल हो गयी हो उसे सूक्ष्म बना लो और मोक्ष की अनुभूति के लिए उत्सुक हो जाओ । तभी काम बनेगा और इसके लिए वृत्ति को सूक्ष्म करना पड़ेगा ।

जहाँ काम आवे सूई क्या करे तलवार ?

सूई भी लोहे की है और तलवार भी लोहे की है । तलवार को हजार बार हाथ जोड़ो, प्रार्थना करो कि 'जरा-सा कपड़ा सी दे ।' फिर भी तलवार कपड़ा सीने के काम नहीं आएगी । कपड़ा सीने के लिए तो सूक्ष्म नोंकवाली सूई ही चाहिए । जैसे, सूई नुकीली होती है तो दोनों कपड़ों में से पसार होकर कपड़ों को जोड़ देती है ऐसे ही चित्त की वृत्ति सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम होती है तब जीव-ब्रह्म की एकता का अनुभव होता है । यही बड़े-में-बड़ा अनुभव है । आपकी इस उपलब्धि की तरफ रुचि हो यही बड़े-में-बड़ा आशीर्वाद है ।''

'होली' अर्थात् हो... ली...

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

मंगलमय ईश्वर को जानकर आप जो कुछ करते हैं वह मंगलमय हो जाता है ।

होली : हो... ली... अर्थात् जो हो गया । जो हो गया उसे भूल जाओ । निंदा हो ली सो हो ली, प्रशंसा हो ली सो हो ली । हो... ली... जो हो गया सो हो गया । तुम तो रहो मस्ती और आनंद में ।

होली : हो... ली... अर्थात् जो हो गया । जो हो गया उसे भूल जाओ । निंदा हो ली सो हो ली, प्रशंसा हो ली सो हो ली । हो... ली... जो हो गया सो हो गया । तुम तो रहो मस्ती और आनंद में ।

होली का यह उत्सव बड़ा प्राचीन उत्सव है । पहले इस होलि के उत्सव में, वसंतोत्सव में नये गेहूँ, नये जौ आदि की यज्ञ में आहुतियाँ दी जाती थीं फिर अन्न ग्रहण करते थे । आज भी कच्चे चने जो भूने जाते हैं उसे 'होला' बोलते हैं । यह 'होला' मानो उसी प्राचीन 'होली' का प्रतीक है ।

होली एक ऐसा अनूठा त्यौहार है जिसमें गरीब की संकीर्णता और अमीर का अहं दोनों किनारे रह जाते हैं । दबा हुआ मन एवं अहंकारी मन, दूषित मन और शुद्ध मन- आज ये सारे मन 'अमन' होकर मालिक के रंग में रंगने के लिए मैदान में आ जाते हैं ।

जिसका मन खुला होता है उस पर आसुरी वृत्ति, राक्षसी वृत्ति का प्रभाव नहीं पड़ता है किन्तु जो दबा-सिकुड़ा रहता है, भयभीत रहता है उसी पर दूसरे का दबाव आता है और उसीका शोषण होता है ।

इस 'होली' ने न जाने कितने टूटे हुए दिलों को जोड़ा है और न जाने कितने सूखे दिल रंगे हैं, भिगोये हैं ! मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि मनुष्य को कभी-कभी 'फ्री सोसायटी' मिलनी चाहिए । एकदम बंधनमुक्त... जो 'फ्री सोसायटी' की आवश्यकता बताते हैं उन्हें हम धन्यवाद देते हैं लेकिन हमारी भारतीय संस्कृति में 'फ्री सोसायटी' की आवश्यकता नहीं बतायी गयी किन्तु इस आवश्यकता को पूरी करने के लिए होलि का उत्सव ही व्यवस्थित चल रहा है । होलि का उत्सव मन की स्वतंत्रता प्रदान करता है ।

जब वैदिक ढंग से होली मनायी जाती थी उस जमाने में मानसिक तनाव-खिंचाव आदि नहीं होते थे किन्तु आज जहरीले रंगों के प्रयोग, शराब आदि पीने-पिलाने एवं कीचड़ आदि उछालने से होली का रूप बड़ा विकृत हो गया है । जिसका मन खुला होता है उस पर आसुरी वृत्ति, राक्षसी वृत्ति का प्रभाव नहीं पड़ता है किन्तु जो दबा-सिकुड़ा रहता है, भयभीत रहता है उसी पर दूसरे का दबाव आता है और उसीका शोषण होता है । अतः न किसीसे भयभीत हो, न किसीको भयभीत करो । यह मुक्ति देने का और मुक्त होने का दिन है । आप भी मुक्त होकर हँसिए-खेलिए और दूसरों को भी हँसने-खेलने दीजिए ।

वसंत इन्नु रत्नयोः
ग्रीष्म इन्नुः रत्नयः ।
वर्षाऽपिन्नुः शरदोः हेमंतः
शिशिरः इन्नुः रत्नयः ॥

यह सामवेद का मंत्र है जिसका अर्थ है 'निश्चय ही वसंत रमणीय हो, निश्चय ही ग्रीष्म रमणीय हो, निश्चय ही वर्षा और उसके पीछे के शरद, हेमंत और शिशिर हमारे रमणीय हों ।'

मनुष्य परिस्थितियों का दास नहीं, वरन् स्वामी

है । परिस्थितियाँ मनुष्य का निर्माण नहीं करतीं अपितु मनुष्य परिस्थितियों का निर्माण करता है, इसलिए शुभ संकल्प करके आगे बढ़ना चाहिए ।

वेद सदैव हममें पौरुष भरते हैं और वैदिक रीति-रिवाज हमेशा हममें पौरुष का फल जगाने के लिए ऐसी व्यवस्था उत्सव के रूप में कर देते हैं ताकि हम 'छोटा-बड़ा, सुख-दुःख, मिलना-बिछुड़ना आदि सब कल्पित हैं... केवल एक आनंदस्वरूप आत्मा ही सत्य है' इस सत्य को जान सकें, इस सत्य के आनंद को, सत्य के रस को, सत्य के माधुर्य को पा सकें एवं मिथ्या आडंबर, मेरे-तेरे, छोटे-बड़े के भेद को मिटाकर एक साथ आनंदित होने का अवसर पा सकें ।

वेद सदैव हममें पौरुष भरते हैं और वैदिक रीति-रिवाज हमेशा हममें पौरुष का फल जगाने के लिए ऐसी व्यवस्था उत्सव के रूप में कर देते हैं ।

होली निश्चय ही हमारे जीवन को अनेक पीड़ाओं से बचाकर मुस्कराहट की ओर ले आती है ।

अनेक पीड़ाओं के बीच भी मुस्कराकर जीने की कला का नाम है प्रहलाद ।

एक राक्षसी ने तप करके शिवजी से वरदान तो पा लिया था कि 'वह किसी भी बालक को इच्छानुसार ग्रहण कर सकेगी' लेकिन शिवजी ने यह शर्त भी रख दी थी कि 'जो होली के दिन निःशंक होकर नाचेगा-कूदेगा, उत्सव मनायेगा, आनंदित होगा और कुछ भी बोलने में संकोच नहीं करेगा ऐसा फक्कड़ मनुष्य और उसकी संतान तेरे चुंगल में कभी नहीं आयेगी ।' यह कथा चाहे समझाने के लिए हो या घटित घटना हो लेकिन इतना तो अवश्य समझना चाहिए कि अपने चित्त को संशयों से, डर से और सिकुड़ान से बाहर ले आना चाहिए ।

होलिका प्रहलाद को गोद में लेकर बैठ गयी लेकिन होलिका जल मरी और प्रहलाद बच गया ।

अनेक विघ्न-बाधाओं से जूझते रहने पर भी प्रहलाद की श्रद्धा नहीं डिगी । अनेक पीड़ाओं के बीच भी मुस्कराकर जीने की कला का नाम है **प्रहलाद** । विघ्न-बाधा एवं मुसीबतों के बीच तथा श्रद्धाहीन व्यक्तियों के दबाववाले वातावरण में रह सके - उसका नाम है प्रहलाद । हम अदितिपुत्र देवों के उपासक हैं फिर भी दैत्यपुत्र प्रहलाद से हमें बहुत कुछ सीखने को मिलता है ।

पिता हिरण्यकशिपु भगवान् के नाम से भी चिढ़ता था । वैदिक रीति-रिवाजों का ध्वंस करता था । 'हिरण्यकशिपु' अर्थात् जो स्वर्ग के पीछे, धन के पीछे अंधी दौड़ लगाये । शांति, मुक्तिदायक परमात्मा का जप न तो स्वयं करे, न ही किसीको करने दे - ऐसे हिरण्यकशिपु पिता के घर जन्मा है प्रहलाद फिर भी आनंदित और आह्लादित रहता है ।

एक बार पिता ने पुत्र प्रहलाद को अपनी गोद में बैठाते हुए कहा : ''पुत्र ! मैं तुझे इतना-इतना रोकता-टोकता हूँ फिर भी तू भगवान विष्णु की भक्ति नहीं छोड़ता... आखिर बात क्या है ?''

तब प्रहलाद ने कहा :

''पिताजी ! आप पूछते ही हैं तो एक कथा सुनिये । एक राजा ने बड़ा परिश्रम करके, नौ-दस महीने तक मेहनत करके एक महल बनाया और वह राजा महल में रहने के लिए आया किन्तु उस महल में एक मच्छर 'भूँऽऽऽ... भूँऽऽऽ...' करने लगा तो क्या राजा महल छोड़कर भाग जायेगा ?''

हिरण्यकशिपु : ''हरगिज नहीं ।''

प्रहलाद : ''ऐसे ही यह जीवात्मा माता के गर्भ में नौ-दस महीने रहकर, अपना शरीररूपी नौ द्वारवाला महल बनाता है । फिर उस महल में रहकर आनंदस्वरूप आत्मसुख को, ईश्वर को पाने का यत्न करता है तो आपके जैसा मच्छर यदि 'भूँऽऽऽ... भूँऽऽऽ...' करने लगे तो मैं भक्ति छोड़ दूँ क्या ?''

कितनी खरी सुना दी उस दैत्यपुत्र ने ! किन्तु

उस क्रूर स्वभाववाले हिरण्यकशिपु को हुआ कि 'इतना डाँटने फटकारने पर भी प्रहलाद नहीं मानता, अतः उसे मृत्युदंड दिया जाना चाहिए।' यह सोचकर उसने एक षडयंत्र रचा।

उसकी बहन होलिका को वरदान था कि अमुक मंत्र जपकर वह अग्नि के बीच भी बैठे तो उसे अग्नि नहीं जलायेगी। अतः होलिका को यह काम सौंपा कि : ''तू प्रहलाद को गोद में लेकर अग्नि में बैठ जा। तू तो जलनेवाली नहीं है और प्रहलाद जल मरेगा तो मेरा सिरदर्द मिट जायेगा।''

व्यवस्था की गयी। होलिका प्रहलाद को गोद में लेकर बैठ गयी लेकिन होलिका जल मरी और प्रहलाद बच गया। नीच वृत्तिवाले के पास यदि न जलने का सामर्थ्य भी हो तब भी नीच वृत्तिवाले जलते रहते हैं और प्रहलाद जैसे भक्त उस अग्निपरीक्षा से भी पार हो जाते हैं।

प्रहलाद विश्व का ऐसा प्रथम नागरिक था जिसने पिता के ही आगे सत्याग्रही होकर दिखाया। कितना राज्यबल ! कितनी कूटनीति का बल ! फिर भी प्रहलाद ने सत्य का आग्रह नहीं छोड़ा : ''जब एक ईश्वर ही सत्य है तो मैं उसीको पाऊँगा। वह ईश्वर ही प्राणीमात्र का आधार है। मैं उसीकी भक्ति में अडिग रहूँगा। पिताजी ! आपको जो करना हो, करें। पिछले जन्म में भी न जाने कौन मेरा पिता था और मैं किसका पिता था यह मैं नहीं जानता लेकिन मुझमें और आपमें, नर- नारी के अंतःकरण में जिसकी चेतना कार्य कर रही है, मैं उस नारायण की ही शरण में रहूँगा।''

पिता प्रहलाद को जितना ही मुसीबतों के बीच डालता है उतना ही वह सत्याग्रह में दृढ़ रहता है। कितनी दृढ़ निष्ठा है प्रहलाद में !

होलि का उत्सव हमें यही पावन संदेश देता है कि हम भी अपने जीवन में आनेवाली विघ्न-बाधाओं का धैर्यपूर्वक सामना करें एवं कैसी भी विकट परिस्थिति हो किन्तु प्रहलाद की तरह ही अपनी श्रद्धा को भी अडिग बनाये रखें। जहरीले रंगों की जगह परम शुद्ध, परम पावन परमात्म-नामसंकीर्तन के रंग में रंगें-रंगायें एवं छोटे-बड़े, मेरे-तेरे के भेदभाव को भूलकर सभी में उसी एक सत्यस्वरूप, चैतन्यस्वरूप परमात्मा को निहारकर अपना जीवन धन्य बनाने के मार्ग पर अग्रसर हों...

अद्वैत होली

होली जली तो क्या जली, पापिन अविद्या नहीं जली।
आशा जली नहीं राक्षसी, तृष्णा पिशाची नहीं जली॥
जुलसा न मुख आसक्ति का, नहीं भस्म ईर्ष्या की हुई।
ममता न झोंकी अग्नि में, नहीं वासना फूँकी गई॥
नहीं धूल डाली दम्भ पर, नहीं दर्प में जूते दिये।
दुर्गति न की अभिमान की, नहीं क्रोध में घूँसे दिये॥
अज्ञान को खर पर चढ़ाकर मुख नहीं काला किया।
ताली न पीटी काम की, तो खेल होली क्या लिया॥
छाती मिलाते शत्रु से, सन्मित्र से मुख मोड़ते।
हितकारी ईश्वर छोड़कर, नाता जगत से जोड़ते॥
होली भली है देश की, अच्छी नहीं परदेश की।
सुनते हुए बहरे हुए, नहीं याद करते देश की॥
माजून खाई भंग की, बौछार कीन्ही रंग की।
बाजार में जूता उछाला, या किसी से जंग की॥
गाना सुना या नाच देखा, ध्वनि सुनी मौंचंग की।
सुध बुध भुलाई आपनी, बलिहारी ऐसे रंग की॥
होली अगर हो खेलनी, तो संत सम्मत खेलिये।
सन्तान शुभ ऋषि मुनिन की, मत संत आज्ञा पेलिये॥
सच को ग्रहण कर लीजिये, जो झूठ हो तज दीजिये।
सच झूठ के निर्णय बिना, नहीं काम कोई कीजिये॥
होली हुई तब जानिये, संसार जलती आग हो।
सारे विषय फीके लगें, नहीं लेश उनमें राग हो॥
हो शांति कैसे प्राप्त निश दिन, एक यह ही ध्यान हो।
संसार दुःख कैसे मिटे, किस भाँति से कल्याण हो॥
होली हुई तब जानिये, पिचकारी सद्गुरु की लगे।
सब रंग कच्चे जांय उड़, यक रंग पक्के में रंगे॥
नहीं रंग चढ़े फिर द्वैत का अद्वैत में रंग जाय मन।
है सेर जो चालीस सो ही जानियेगा एक मन॥
होली हुई तब जानिये, श्रुति वाक्य जल में स्नान हो।
विक्षेप मल सब जाय धुल, निश्चिन्त मन अम्लान हो॥
शोकाग्नि बुझ निर्मूल हो, मति स्वस्थ निर्मल शांत हो।
शीतल हृदय आनन्दमय, तिहुँ पाप का पूर्णान्त हो॥
होली हुई तब जानिये, सब दृश्य जल कर छार हो।
अज्ञान की भस्मी उड़े, विज्ञानमय संसार हो॥
'हो' मांहिं हो लवलीन सब, है अर्थ होली का यही।
बाकी बचे सो तत्त्व अपना, आप सबका है वही॥
भोला ! भली होली भयी, भ्रम भेद कूड़ा बह गया।
नहीं तू रहा नहीं मैं रहा, था आप सो ही रह गया॥
अद्वैत होली चित्त देकर, नित्य जो नर गायेगा।
निश्चय अमर हो जायगा, नहीं गर्भ में फिर आयेगा॥

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

तस्मात् सर्व प्रयत्नेन भवबन्धः मुक्तये ।
स्वयिरेव यत्न कर्तव्यो रोगादिरिवपण्डिते ॥

जैसे, रोग होने पर उसके निवारण का यत्न स्वयं ही किया जाता है, वैसे ही बुद्धिमान मनुष्य को भवबंधन से मुक्ति पाने के लिए पूरा प्रयत्न स्वयं ही करना चाहिए ।

जैसे, शरीर का रोग मिटाने के लिए दवाई, परहेज एवं विश्वास की जरूरत है, वैसे ही भवबंधन रूपी रोग को मिटाने के लिए साधना एवं ईश्वर-ध्यानरूपी औषध, संयमरूपी परहेज एवं सद्‌गुरु व सत्शास्त्र पर विश्वास, इन तीनों का आश्रय लेता है साधक ।

जैसे, शरीर का रोग मिटाने के लिए दवाई, परहेज एवं विश्वास की जरूरत है, वैसे ही भवबंधन रूपी रोग को मिटाने के लिए साधना एवं ईश्वर-ध्यानरूपी औषध, संयमरूपी परहेज एवं सद्‌गुरु व सत्शास्त्र पर विश्वास - इन तीनों का आश्रय लेता है साधक ।

विश्वासो फलदायकः ।

'जीवन भर केवल विश्वास करते रहो और फल मृत्यु के बाद मिलेगा' - यही अर्थ नहीं है । यह तो केवल सामान्य अर्थ है । उत्तम अर्थ तो यह है कि विश्वास करते रहो और अनुभवों से गुजरते रहो । जैसे भोग का दृष्ट फल होता है वैसे ही योग का भी अन्तःकरण में दृष्ट फल होता है । मरने के बाद की मुक्ति, मरने के बाद पुण्यलोकों में जाना - यह मध्यम अर्थ है लेकिन जीते-जी मुक्ति का, परमानंद का, परमात्म तत्त्व का आस्वादन कर लेना यही वास्तविक अर्थ है ।

तीन प्रकार की सृष्टि होती है :

बाह्य इन्द्रियों से जो सृष्टि दिखती है उसे स्थूल सृष्टि कहते हैं । जब साधक पर भगवत्कृपा, गुरुकृपा होती है तब उसे सूक्ष्म सृष्टि में प्रवेश मिलता है । तीसरी है तात्त्विक सृष्टि । स्थूल और सूक्ष्म सृष्टि सुख-दुःख देती है जबकि तात्त्विक सृष्टि सुख-दुःख का मूल्य हटाकर, सुख-दुःख सापेक्ष करवाकर, परमानंद प्रगटा देती है । उस परमानंद के आगे राग-द्वेष दोनों छोटे हो जाते हैं । हालाँकि यह कठिन है किंतु इसका फल बड़ा अपूर्व है ।

राग-द्वेष दोनों खोईए खोजिये पद निर्वाण ।
नानक कहे पथ कठिन है कोई कोई गुरुमुख जान ॥

भगवान श्रीकृष्ण ने भी श्रीमद्‌भगवद्‌गीता के पन्द्रहवें अध्याय के पाँचवें श्लोक में कहा है :

निर्मानमोहा जितसंगदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः ।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताःसुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढा पदमव्ययं तत् ॥

'जिनका मान और मोह नष्ट हो गया है, जिन्होंने आसक्तिरूप दोष को जीत लिया है, जिनकी परमात्मा के स्वरूप में नित्य स्थिति है और जिनकी कामनाएँ पूर्णरूप से नष्ट हो गयी हैं- वे सुख-दुःख नामक द्वन्द्वों से विमुक्त ज्ञानी जन उस अविनाशी परमपद को प्राप्त होते हैं ।'

जिस पद का नाश नहीं होता, जो अव्यय है, उस पद की प्राप्ति होती है तात्त्विक सृष्टि में और वह तात्त्विक सृष्टि हमसे बाहर नहीं है । जैसे, हमारी बुद्धि में ही दुश्मन बन जाता है और दुश्मन की दुश्मनाहट खटकने लगती है । हमारी बुद्धि में ही मित्र बन जाता है और मित्र की मित्रता का रस आने लगता है । बाहर भी शत्रु बनता है तो दुःख मिलता है और मित्र बनता है तो सुख मिलता है । ऐसे ही मन में भी मित्र-शत्रु बन जाते हैं ।

भक्तों की भावमय सृष्टि होती है और भोगी की भोगमय सृष्टि होती है लेकिन ये दोनों सृष्टियाँ जिससे प्रतीत होती हैं उस परमात्मतत्त्व की दृष्टि जगाकर, इन

दोनों के राग-द्वेष से अपने को पार करके निर्वाण पद को पा लेता है तत्त्ववेत्ता। ऐसे तत्त्ववेत्ता महापुरुष अपने-आपमें पूर्ण होते हैं। उनका ईश्वर कहीं आकाश-पाताल में नहीं होता। उनकी मुक्ति मरने के बाद नहीं होती।

बिछुड़े हैं जो प्यारे से दरबदर भटकते फिरते हैं।
हमारा यार है हममें हमन को बेकरारी क्या ?

उनका सुख उनको अपने-आपमें ही मिलता है। मरने के बाद सुख नहीं, कुछ पाने के बाद सुख नहीं, कहीं जाने के बाद सुख नहीं, वरन्...

दिले तस्वीरे है यार !
जब कि गर्दन झुका ली
और मुलाकात कर ली।

जब तुम्हें कोई अपना अत्यंत प्रिय सज्जन, सुहृद मिले, कोई अकारण कृपा करनेवाला व्यक्ति मिले तब कितना सुख होता है ! तत्त्ववेत्ताओं को तो निरंतर वह स्वरूप मिला-मिलाया है तो उन्हें कितना सुख मिलता होगा ! अष्टावक्रजी ने कहा : **तस्य तुलना केन जायते।**

धीरो न द्वेष्टि संसारमात्मानं न दिदृक्षति।
हर्षामर्षविनिर्मुक्तो न मृतो न च जीवति ॥

'हर्ष-शोकरहित ज्ञानी संसार के प्रति न द्वेष करता है और न आत्मा को देखने की इच्छा करता है। वह न मरा हुआ है और न जीता है।'

(अष्टावक्रगीता : १८.८३)

ऐसे तत्त्ववेत्ता संसार की परिस्थिति से अन्तःकरणपूर्वक द्वेष नहीं करते हैं। हालाँकि बाहर से तो वे किसीको डाँटते हैं किसीको प्यार करते हैं किन्तु अन्तःकरण से समझते हैं कि सब खेल है, स्वप्नमात्र है। ऐसे धीर पुरुष की तुलना भला किससे की जा सकती है जो तात्त्विक सृष्टि में जग चुके हैं ? नानकजी ने कितनी बढ़िया बात कही है !

राग-द्वेष दोनों खोईए खोजिये पद निर्वाण।
नानक कहे पथ कठिन है कोई कोई गुरुमुख जान ॥

यह पद कठिन तो है किन्तु असंभव नहीं है। जो गुरुमुख है वह इस पथ को जान लेता है जबकि निगुरे का इसमें प्रवेश ही नहीं। निगुरे की अपनी सीमा है। वह असीम में नहीं जा सकता है। असीम में तो सद्गुरु का प्यारा ही पहुँच सकता है।

गुरु नानक की गादी पर जब तीसरे गुरु अमरदास आये तब उन्होंने देखा कि, 'मैं बनिया... मैं क्षत्रिय... मैं ब्राह्मण...' आदि करके एक ही परमात्मा की संतानें आपस में बँट रही हैं और उनकी बँटौती का दुरुपयोग करनेवाले लोग उन्हें बुरी तरह कुचल रहे हैं। यह देखकर गुरु अमरदास ने सोचा कि ऊँच-नीच, शुद्ध-अशुद्ध आदि बाहर के जो भेद हैं वे अभेद तत्त्व की यात्रा के लिए आरम्भ में तो ठीक थे कि 'जो आगे बढ़ता है उसे शुद्ध कर दो...' लेकिन यह आगे बढ़ने की बात तो किनारे रह गयी और जो उन्नति का साधन था वही अब घृणा करके अवनति का साधन बनता रहा है। हालाँकि यह साधन घृणा के लिए नहीं अपितु एक-दूसरे को ऊपर उठाने के लिए बनाया था। जैसे, जिला-कार्यालय में अपने अलग-अलग विभाग होते हैं, कलेक्टर का अपना काम होता है, डिप्टी कलेक्टर का अपना, तहसीलदार, नायब तहसीलदार और पटवारी का अपना-अपना अलग काम होता है। सब मिलकर जिले की उन्नति में योगदान देते हैं। इसी प्रकार ब्राह्मणादि अलग-अलग वर्ग का अपना-अपना काम था और सब मिलकर समाज की उन्नति में सहयोग देते थे लेकिन जब हीन दृष्टि हो गयी तो काम बिगड़ने लगा और आपस में राग-द्वेष बढ़ गया।

> *इन्द्रियों से जो सृष्टि दिखती है उसे स्थूल सृष्टि कहते हैं। साधक पर भगवत्कृपा, गुरुकृपा होती है तब उसे सूक्ष्म सृष्टि में प्रवेश मिलता है। तीसरी है तात्त्विक सृष्टि।*

> *भक्तों की भावमय सृष्टि होती है और भोगी की भोगमय सृष्टि होती है लेकिन ये दोनों सृष्टियाँ जिससे प्रतीत होती हैं उस परमात्मतत्त्व की दृष्टि जगाकर, इन दोनों के राग-द्वेष से अपने को पार करके निर्वाण पद को पा लेता है तत्त्ववेत्ता।*

प्रेम की कमी से ही राग-द्वेष पैदा होता है, कलह पैदा होता है । वर्ण-विभाग दिया तो था परमात्म-प्रेम पाने के लिए किन्तु काल के प्रभाव से सब गड़बड़ हो गया... वरना मूल पुरुषों का उद्देश्य यह नहीं था कि 'शूद्र जाति से अन्याय हो और अमुक जाति की विशेषता हो ।

अमरदास ने देखा कि समय की माँग के अनुसार सबका संगठन जरूरी है । अत: उन्होंने अपने शिष्यों को आज्ञा दी कि सबके-सब एक साथ पंगत में बैठकर भोजन करेंगे । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की अलग-अलग पंगत नहीं, वरन् सभी को साथ बैठकर भोजन करना होगा ।' तबसे भण्डारे में सब एक साथ बैठकर भोजन करने लगे ।

प्रेम की कमी से ही राग-द्वेष पैदा होता है, कलह पैदा होता है । वर्ण-विभाग दिया तो था परमात्म-प्रेम पाने के लिए किन्तु काल के प्रभाव से सब गड़बड़ हो गया ।

धीरे-धीरे अमरदासजी की गुरुभक्ति, उनकी साधना और उनकी कार्य-व्यवस्था की बात दूर-दूर तक प्रशंसनीय हो चली और उस प्रशंसा की बात अकबर के कानों तक भी गयी । तब अकबर ने ख्वाहिश जाहिर की : ''हम अमरदासजी के ठिकाने में जाकर उनसे मिलना चाहेंगे ।''

अकबर की इच्छा को जानकर कुछ अमलदार अमरदासजी के पास आये और बोले :

''जहाँपनाह अकबर आपके यहाँ आकर आपसे मिलना चाहते हैं ।''

तब अमरदासजी ने कहा :

''बेशक आयें और मिलें लेकिन उनसे कहना कि सम्राट होकर न आयें और सम्राट होकर न मिलें । वरन् यहाँ आकर सब बन्दों के साथ, अकाल पुरुष के बंदे होकर भोजन पायें और परमात्मा के नाते आकर मिलें तो हमें खुशी होगी ।''

अकबर ने यह बात स्वीकार कर ली और कथा कहती है कि अमरदासजी की पंगत में आकर उसने भोजन भी किया ।

आज कल तो... तथाकथित यह सुधरा हुआ जमाना...

पद-प्रतिष्ठा के अभिमान में व्यक्ति इतना जकड़ गया है कि अब वह ईमानदारी से हँस भी नहीं सकता, ईमानदारी से रो नहीं सकता, ईमानदारी से नाच-गा नहीं सकता, ईमानदारी से आपस में मिलकर भोजन नहीं कर सकता... अरे ! कभी ऐसा भी अवसर लाओ कि वास्तविक 'मैं' में जाने के अधिकारी बन सको ।

अकबर ने अमरदासजी के लंगर में भोजन किया और सत्संग भी सुना । उस दिन अकबर को बड़ा आनंद आया क्योंकि चित्त में से 'मैं' थोड़ा ढीला हो गया । आनंद तो पहले से ही था किन्तु अहं का थोड़ा त्याग किया तो आनंद छलकने लगा । अकबर कृतार्थ हो गया ।

अकबर ने अमरदासजी के लंगर में भोजन किया और सत्संग भी सुना । उस दिन अकबर को बड़ा आनंद आया क्योंकि चित्त में से 'मैं' थोड़ा ढीला हो गया । आनंद तो पहले से ही था किन्तु अहं का थोड़ा त्याग किया तो वह छलकने लगा । अकबर कृतार्थ हो गया ।

हम जितना-जितना अपने अहं को मिटाते जाते हैं उतने ही उतने परमात्मा के निकट पहुँचते जाते हैं और परमात्मा के निकट पहुँचने पर आनंद स्वाभाविक ही आने लगता है क्योंकि परमात्मा है ही स्वयं आनंदस्वरूप, आनंद का भण्डार और भण्डार भी कैसा कि जो कभी न खूटे ! लगाओ गोता । मिटाओ अहं और पा लो वह अखूट खजाना तुम भी । हरि ॐ... ॐ... ॐ... हरि ॐ... ॐ... ॐ...

किसी देश में उस समय तक एकता और प्रेम नहीं हो सकता, जब तक उस देश के निवासी एक-दूसरे के दोषों पर जोर देते रहते हैं । - स्वामी रामतीर्थ

नियम में निष्ठा

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

केवल मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जो उन्नति कर सकता है । मगर सावधान नहीं रहा तो अवनत भी हो सकता है । या तो उसका उत्थान होता है या पतन होता है, वहीं-का-वहीं नहीं रहता । अगर मनुष्य उन्नति के कुछ नियम जान ले और निष्ठापूर्वक उसमें लगा रहे तो पतन से बच जायेगा और अपने कल्याण के मार्ग पर आगे बढ़ता जायेगा । आध्यात्मिक पतन न हो, इसलिए हररोज कम-से-कम भगवन्नाम जप की दस माला करनी ही चाहिए ।

त्रिबंध प्राणायाम से माला में एकाग्रता बढ़ेगी और जप करने में भी आनंद आयेगा ।

दूसरी बात : त्रिबंध प्राणायाम करने चाहिए । इससे माला में एकाग्रता बढ़ेगी और जप करने में भी आनंद आयेगा ।

नियम में अडिग रहने से अपना बल बढ़ता है जिससे हम अपने जीवन की बुरी आदतों को मिटा सकते हैं ।

माला आसन पर बैठकर ही करनी चाहिए जिससे मंत्रजाप से उत्पन्न होनेवाली विद्युतशक्ति जमीन में न चली जाए । अर्थिंग मिलने से तुम्हारी साधना का प्रभाव वहीं क्षीण हो जाता है ।

यदि आसन पर बैठकर जप करते हो और अर्थिंग नहीं होने देते हो तो भजन के बल से एक आध्यात्मिक विद्युत के कण पैदा होते हैं जो तुम्हारे शरीर के वात, पित्त और कफ के दोषों को क्षीण करके स्वास्थ्य की रक्षा करते हैं । यही कारण है कि हमारे ऋषि-मुनि प्राय: ज्यादा बीमार नहीं पड़ते थे ।

नियम में अडिग रहने से अपना बल बढ़ता है जिससे हम अपने जीवन की बुरी आदतों को मिटा सकते हैं । जैसे, कइयों को आदत होती है ज्यादा बोलने की । उस बेचारे को पता ही नहीं होता है कि ज्यादा बोलने से उसकी कितनी शक्ति नष्ट होती है । वाणी का व्यय नहीं करना चाहिए । गुजराती में कहा गया है कि न बोलने में नौ गुण होते हैं । **'न बोलवामां नव गुण ।'** कम बोलने से या नहीं बोलने से ये लाभ हैं : झूठ बोलने से बचेंगे, निंदा करने से बचेंगे, राग-द्वेष से बचेंगे, ईर्ष्या से बचेंगे, क्रोध और अशांति से बचेंगे, कलह से बचेंगे और वाणीक्षय के दोष से बचेंगे । इस प्रकार छोटे-मोटे नौ लाभ होते हैं ।

अधिक बोलने की आदत साधक को तो बहुत हानि पहुँचाती है । साधक से बड़े-में-बड़ी गलती यह होती है कि यदि कुछ शक्ति आ जाती है या कुछ अनुभव होते हैं तो उसका उपयोग करने लगता है, दूसरों को बता देता है । उससे वह एकदम गिर जाता है । फिर वह अवस्था लाने में बहुत मेहनत करनी पड़ती है । इसलिए साधकों को अपना अनुभव किसीको नहीं कहना चाहिए । अगर साधक किसीको ईश्वर की ओर मोड़ने में सहयोगी होता हो, अपने अनुभव से उसकी श्रद्धा में असर होता हो तो फिर थोड़ा-बहुत ऊपर-ऊपर से बता देना चाहिए किन्तु पूरा नहीं बताना चाहिए ।

जिस तरह वाणी पर संयम लाया जा सकता है और बुरी आदतें भी मिटायी जा सकती हैं उसी तरह यदि ज्यादा खाने का, काम-विकार का या शराब आदि का दोष है तो उसे भी दूर किया जा सकता है ।

जब कामुकता जग रही हो तो उससे होनेवाली हानियों पर नजर डालनी चाहिए व संयम से होनेवाले लाभ पर दृष्टि डालनी चाहिए । मन को समझाना चाहिए कि : 'शरीर में है क्या ? दो आड़ी हड्डियाँ और दो

खड़ी हड्डियाँ, मांस, मल-मूत्र, रक्त और ऊपर से चमड़े का कवर । फिर भी यह हाड़-मांस का शरीर उस परम सुंदर चैतन्य के कारण सुंदर लगता है । तू उसी चैतन्य से प्रेम कर, अपने आत्मा में आ । हे मेरे प्रभु ! अब मैं विकारों में नहीं गिरूँगा, काम में नहीं गिरूँगा वरन् मैं तो तेरे शुद्ध चैतन्यस्वरूप में, राम में रहूँगा... ॐ... ॐ... ॐ...'

इस तरह एक सप्ताह तक का नियम ले लिया काम-विकार में न गिरने का और सप्ताह पूरा होने के पहले ही दूसरा सप्ताह बढ़ा दिया ।

डण्डे के बल से या पुचकार से बन्दर, शेर आदि पशुओं को भी वश किया जा सकता है । इसी तरह अपने मन को कभी कठोर प्रतिज्ञा तो कभी पुचकार से वश में करने के संस्कार रोज डालते रहो ।

अपने मस्तिष्क में दिव्य विचार भरना और पोसना नितांत आवश्यक है । डण्डे के बल से या पुचकार से बन्दर, शेर आदि पशुओं को भी वश किया जा सकता है । इसी तरह अपने मन को कभी कठोर प्रतिज्ञा तो कभी पुचकार से वश में करने के संस्कार रोज डालते रहो ।

जो लोभ के दल-दल में फँसे, उन्होंने आनंद, शांति, माधुर्य खोया । अतः लोभ से बचने के लिए दान-पुण्य आदि सत्कर्म करो । औदार्य-सुख पाने में मन को लगाओ ।

लोभ के विचार आने पर विचारो कि : 'आखिर में कौन अपने साथ क्या ले गया ?'

क्या करिये क्या जोड़िये थोड़े जीवन काज ।
छोड़ि-छोड़ि सब जात हैं देह गेह धन राज ॥

जो लोभ के दलदल में फँसे, उन्होंने आनंद, शांति, माधुर्य खोया । अतः लोभ से बचने के लिए दान-पुण्य आदि सत्कर्म करो । औदार्य-सुख पाने में मन को लगाओ ।

छोटी-छोटी बातों में भय सताता हो तो प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व उठकर शान्त मन से चिन्तन करो कि 'निर्भय नारायण मेरे साथ हैं । अब मैं जरा-जरा बात में भयभीत न होऊँगा । पाप से, दुश्चारित्र्य से भय कर, लेकिन हे मेरे मन ! अच्छे रास्ते पर चलने में भय किस बात का ? ॐ... ॐ... ॐ... मैं निर्भय हूँ । ॐ... ॐ... ॐ... मैं निर्भय नारायण का अंग हूँ ।' ये विचार बार-बार मन में भरो ।

'चटोरेपन, स्वादलोलुपता की आदत अकारण रोग लाती है, स्वास्थ्य बिगाड़ती है और आयुष्य क्षीण करती है । जो जिह्वा एक दिन जल जानेवाली है, उसके पीछे मैं अपना जीवन क्यों नष्ट करूँ ? अब मैं स्वादलोलुपता से बचूँगा । अब मैं कम नमक-मिर्च-मसालेवाला सादा सात्त्विक भोजन ही करूँगा । स्वस्थ रहूँगा व दीर्घजीवी होऊँगा । चटोरेपन का शिकार होकर अकाल नहीं मरूँगा ।'

ऐसे दिव्य विचार भरने के लिए थोड़ा समय अवश्य निकालना चाहिए, अन्यथा पुरानी आदतें साधन-भजन में बरकत नहीं आने देंगी और अपने को असमर्थ समझकर हम दैवी लाभ से वंचित् होते रहेंगे ।

केवल मंदिरों में जाने से या माला घुमाने से ही काम नहीं चलता अपितु रोज थोड़े दुर्गण हटाते जाओ और थोड़े सद्‌गुण भरते जाओ । इससे आप शान्ति, प्रसन्नता, संतोष, आरोग्यता, उत्साह आदि सद्‌गुणों के धनी बन जाओगे ।

बीड़ी-सिगरेट, गाँजा, शराब आदि के सेवन की बुरी आदतें एक दिन में नहीं आती अपितु बार-बार ऐसे प्रयोग से बुराइयाँ जीवन का अंग बन जाती हैं । ऐसे ही बुराइयों को निकालते हुए अच्छाइयों को अपनाओ तो अच्छाइयाँ भी जीवन का अंग हो जायेंगी । जो भी दुर्गुण हों, उनसे होनेवाली हानियों पर नजर डालो

(शेष पृष्ठ २५ पर)

सेवा कर निर्बन्ध की...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

परब्रह्म परमात्मा को न जानना उसका नाम है अविद्या। उसे कारण शरीर भी कहते हैं। कारण शरीर से सूक्ष्म शरीर बनता है। सूक्ष्म शरीर की माँग होती है देखने की, सुनने की, सूँघने की, चखने की। सूक्ष्म शरीर की इच्छा होती है तो फिर स्थूल शरीर धारण होता है। स्थूल शरीर के द्वारा जीव भोग की इच्छाओं को पूर्ण करना चाहता है। स्थूल शरीर से भोग भोगते-भोगते सूक्ष्म शरीर को लगता है कि इसीमें सुख है और अपना जो सुखस्वरूप है उसे भूल जाता है। अविद्या के कारण ही व्यक्ति अपने असली स्वरूप को जान नहीं पाता है।

यह बहुत सूक्ष्म बात है। यह ब्रह्मविद्या है। इसको सुनने मात्र से जो पुण्य होता है, उसका बयान करने के लिये घंटों का समय चाहिए। इसे सुनकर थोड़ा-बहुत मनन करे उसका तो कल्याण होता ही है लेकिन मनन के पश्चात् निदिध्यासन करके फिर उस परमात्मा में डूब जाये, परमात्मामय हो जाये तो उसके दर्शन मात्र से औरों का भी कल्याण हो जाता है। नानकजी कहते हैं :

ब्रह्मज्ञानी का दर्शन बड़भागी पावै।

भाग्यवान व्यक्ति ही ब्रह्मज्ञानी महापुरुष के दर्शन कर सकता है। अभागे को ब्रह्मज्ञानी के दर्शन भी नहीं होते हैं। थोड़े भाग्य होते हैं तो धन मिल जाता है। थोड़े ज्यादा भाग्यवान को सत्ता-पद-प्रतिष्ठा मिलती है लेकिन महाभाग्यवान को संत मिलते हैं। 'संत' का मतलब है जिनके जन्म-मरण का अंत हो गया है, जिनकी अविद्या का अंत हो गया है, जिनकी आत्मा-परमात्मा की दूरी का अंत हो गया है। ऐसे संतों के लिये तुलसीदासजी ने कहा है :

पुण्य पुंज बिनु मिलहिं न संता।

जब व्यक्ति के पुण्यों का पुंज, पुण्यों का खजाना भर जाता है तब उसे संत मिलते हैं और जब संत मिलते हैं तब भगवान मिलते हैं। भगवान की कृपा से, पुण्यों के प्रभाव के कारण संत मिलते हैं और संतों की कृपा से भगवान मिलते हैं। जब दोनों की कृपा होती है तब आत्म-साक्षात्कार होता है।

ईश कृपा बिन गुरु नहीं, गुरु बिना नहीं ज्ञान।
ज्ञान बिना आत्मा नहीं, गावहिं वेद पुरान॥

ईश्वर की कृपा के बिना गुरु नहीं मिलते और गुरु की कृपा के बिना ज्ञान नहीं मिलता।

> *भाग्यवान व्यक्ति ही ब्रह्मज्ञानी महापुरुष के दर्शन कर सकता है। अभागे को ब्रह्मज्ञानी के दर्शन भी नहीं होते हैं। थोड़े भाग्य होते हैं तो धन मिल जाता है। थोड़े ज्यादा भाग्यवान को सत्ता-पद-प्रतिष्ठा मिलती है लेकिन महाभाग्यवान को संत मिलते हैं।*

गुरु का मतलब यह नहीं कि थोड़ा त्राटक आदि कर लिया, थोड़ी-बहुत बोलने की कला सीख ली, थोड़े-बहुत भजन-कीर्तन, किस्से-कहानियाँ, कथा-प्रसंगों से लोगों को प्रभावित कर दिया और बन गये गुरु।

गोपो वीज्जी टोपो
धिस्की वेठो गादीय ते।

गोपा टोपा पहनकर गादी पर बैठ गया और गुरु बनकर कान में फूँक मार दिया, मंत्र दे दिया, माला पकड़ा दी। आज कल तो ऐसे गुरुओं का बाहुल्य है।

विवेकानंद कहते थे : "गुरु बनना माने शिष्यों के कर्मों को सिर पर लेना, शिष्यों की जिम्मेदारी लेना। यह कोई बच्चों का खेल नहीं है। आज कल जो गुरु बनने के चक्कर में पड़ गये हैं वे लोग ऐसे

हैं जैसे कंगला आदमी प्रत्येक व्यक्ति को हजार सुवर्णमुद्रा दान करने का दावा करता है । ऐसे लेभागु गुरुओं के लिये कबीरजी ने कहा है :

गुरु लोभी शिष्य लालची, दोनों खेले दाँव ।
दोनों डूबे बाँवरे चढ़ी पत्थर की नाव ॥

एक राजा था । उसका कुछ विवेक जगा था तो वह अपने कल्याण के लिये कथा-वार्ताएँ सुनता रहता था पर उसके गुरु ऐसे ही थे । राजा को उनकी कथाओं से कोई तसल्ली नहीं मिली, चित्त को शांति नहीं मिली ।

ईश्वर की कृपा के बिना गुरु नहीं मिलते और गुरु की कृपा के बिना ज्ञान नहीं मिलता ।

आखिर वह राजा कबीरजी के पास आया । उसने कहा : ''महाराज ! मैंने बहुत कथाएँ सुनी हैं लेकिन आज तक मेरे चित्त को चैन नहीं मिला है ।''

पंडित ने कहा : ''मैं राजा को कैसे छुड़ाऊँ ? मैं तो स्वयं बँधा हुआ हूँ ।''

कबीरजी ने कहा :

''अच्छा ! मैं कल राज-दरबार में आऊँगा । तुम अठारह साल से कथा सुनते हो और शांति नहीं मिली ? कौन तुम्हें कथा सुनाते हैं वह मैं देखूँगा ।''

दूसरे दिन कबीरजी राज-दरबार में गये । उन्होंने राजा से कहा : ''जिनसे ज्ञान लेना होता है, जिनसे शांति की अपेक्षा रखते हो उनके कहने में चलना पड़ता है ।''

राजा ने कहा :

''महाराज ! मैं आपके चरणों का दास हूँ । आपके कहने में चलूँगा । आप मुझे शांतिदान दें ।''

कबीरजी ने कहा : ''मेरे कहने में चलते हो तो वजीरों से कह दो कि कबीरजी कहें वैसा ही करना ।''

राजा ने वजीरों से कहा : ''अब मैं राजा नहीं हूँ, ये कबीरजी महाराज ही राजा हैं । उन्हें सिंहासन पर बिठा दो ।''

कबीरजी राजा के सिंहासन पर बिराजमान हो गये । फिर कबीरजी ने कहा : ''अच्छा, वजीरों को मैं हुकुम करता हूँ कि जो पंडित तुम्हें कथा सुनाते हैं, उनको एक खम्भे से बाँध दो ।''

राजा ने कहा : ''भाई ! उनको महाराजजी के आगे खम्भे के साथ बाँध दो ।''

पंडितजी को एक खम्भे के साथ बाँध दिया गया । फिर कबीरजी ने कहा : ''राजा को भी दूसरे खम्भे से बाँध दो ।'' वजीर थोड़े हिचकिचाये किन्तु राजा का संकेत पाकर उन्हें भी बाँध दिया । इस तरह पंडितजी और राजा दोनों बँध गये । अब कबीरजी ने पंडित से कहा : ''देखो पंडितजी ! राजा कई वर्षों से तुम्हारी सेवा करता है, तुम्हें प्रणाम करता है, तुम्हारा शिष्य है, वह बँधा हुआ है उसे छुड़ाओ ।''

पंडित ने कहा : ''मैं राजा को कैसे छुड़ाऊँ ? मैं खुद बँधा हुआ हूँ ।''

तब कबीरजी ने कहा :

बन्धे को बन्धा मिले छूटे कौन उपाय ।
सेवा कर निर्बन्ध की जो पल में देत छुड़ाय ॥

जो खुद स्थूल शरीर में बँधा है, सूक्ष्म शरीर में बँधा है, विचारों में बँधा है, कल्पनाओं में बँधा है ऐसे कथाकारों को, पंडितों को हजारों वर्ष सुनते रहो फिर भी कुछ काम नहीं होगा । उससे चित्त को शांति, चैन, आनंद, आत्मिक सुख नहीं मिलेगा ।

जो खुद स्थूल शरीर में बँधा है, सूक्ष्म शरीर में बँधा है, विचारों में बँधा है, कल्पनाओं में बँधा है ऐसे कथाकारों को, पंडितों को हजारों वर्ष सुनते रहो फिर भी कुछ काम नहीं होगा । उससे चित्त को शांति, चैन, आनंद, आत्मिक सुख नहीं मिलेगा ।

सेवा कर निर्बन्ध की
जो पल में देत छुड़ाय ।

निर्बन्ध की सेवा से, निर्बन्ध की कृपा से अज्ञान मिटता है और आत्मज्ञान का प्रकाश मिलता है । सच्ची शांति और आत्मिक सुख का अनुभव होता है । (शेष पृष्ठ २३ पर)

महाराजजी के आशीर्वाद

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

पूना के पास एक संत रहते थे । उनके पास मुंबई के कुछ धनवान उद्योगपति अक्सर जाया करते थे । वे कहते तो थे कि : ''महाराज ! आपके दर्शन हेतु ही आये हैं ।'' लेकिन संत अच्छी तरह से जानते थे कि वे अपना इतना धंधा-कारोबार छोड़कर किस हेतु यहाँ आये हैं ।

वे लोग कुछ देर तो इधर-उधर की बातें करते फिर कहते : ''महाराजजी ! धंधा ठीक से नहीं चल रहा है । आशीर्वाद दो कि धंधे में कुछ बरकत हो ।''

संत कोई मंत्र देते, किसीको आशीर्वाद देते, कुछ युक्ति बताते और कृपा बरसाते हुए कह देते : ''जाओ ! फूलो-फलो ।'' ...और उन लोगों का काम बन जाता । फिर वे बार-बार आने लगे । संत को हुआ कि अब कुछ करना पड़ेगा । वे लोग तुच्छ चीजों का सहारा लेकर जीवन गँवा रहे हैं । वे जानते नहीं हैं कि अपने दिल में छुपे हुए दिलबर को प्यार करके उसका सहारा लें तो बेड़ा पार हो जाए ।

निज सुख बिन मन होवै कि थीरा ।

निज आत्मा के सुख के बिना मन को चैन कहाँ मिलेगा ? चाहे उद्योगपति बन जाओ चाहे प्रधानमंत्री बन जाओ, सब कहनेभर की बड़ाई है । पहले अपने जीवनदाता से एक होकर उसे जानने का पुरुषार्थ करना चाहिए । बड़े उद्योगपति बन जाने के बाद भी अगर आपने अपने वास्तविक बड़प्पन को नहीं पहचाना तो दिखनेभर का बड़प्पन किस काम का ? नश्वर चीजों को 'हमारी-हमारी' करके कई लोग मर गये । जीवनभर चीज-वस्तुओं को, धन को, पद को पाने के पीछे लगे रहे लेकिन अंत में कुछ हाथ नहीं लगा । चीजें, धन, पद सब-का-सब यहाँ-का-यहाँ रह जाता है... चले जाते हैं ठनठनपाल होकर ।

एक बार वे धनवान लोग संत के पास पहुँचे तब संत ने कहा : ''आपको कुछ तकलीफ होती है तब मुझसे आशीर्वाद लेने के लिये आप मुम्बई से दौड़-भाग करके पूना आते हो । आप मुझसे कहो, फिर मैं भगवान को बतलाऊँ, प्रकृति में घटना घटे और फिर अंत में आपको सुख-प्राप्ति हो । इससे तो अच्छा यह है कि आप खुद ही भगवान से बात कर सको, भगवान से सीधा संबंध जोड़ सको ऐसा उपाय मैं आपको बता दूँ । उस उपाय को सीख लो । फिर आप को आशीर्वाद लेने के लिये इधर आने की भी जरूरत नहीं पड़ेगी ।''

संत की बात सुनकर वे लोग खुश हो गये । उन्होंने उपाय पूछा । तब संत ने कहा : ''आप लोग कल सुबह जल्दी स्नानादि करके कम्बल का आसन लेकर आ जाना । मैं आपको भगवान से सीधा संबंध जोड़ने का उपाय बताऊँगा ।''

वे लोग तो सारी रात सो नहीं पाये । उनके तो

निज आत्मा के सुख के बिना मन को चैन कहाँ मिलेगा ? चाहे उद्योगपति बन जाओ, चाहे प्रधानमंत्री बन जाओ, सब कहनेभर की बड़ाई है ।

''आप खुद ही भगवान से बात कर सको, भगवान से सीधा संबंध जोड़ सको ऐसा उपाय मैं आपको बता दूँ । उस उपाय को सीख लो । फिर आपको आशीर्वाद लेने के लिये इधर आने की भी जरूरत नहीं पड़ेगी ।''

मनमें लड्डू फूटने लगे कि 'कितना मजा आ जाएगा ! हम इन्कमटैक्सवालों पर नजर डालेंगे तो वे हस्ताक्षर कर देंगे । ग्राहक पर नजर डालेंगे तो वह माल खरीद लेगा । यह हो जाएगा... वह हो जाएगा...।' सारी रात उनके मनमें गुदगुदी होती रही । दूसरे दिन सुबह वे लोग पहुँच गये महाराजजी के पास ।

महाराजजी ने कहा : ''सब अपनी आँखें बँद कर दो । फिर जैसा मैं बुलवाऊँ ऐसा बोलना ।''

सब लोग कमर सीधी करके, आँखें बँद करके बैठ गये ।

महाराजजी ने बोलना शुरू किया : ''हे भगवान ! आप दयालु हो... कृपालु हो । हमें मनुष्य-जन्म में परेशानियाँ ज्यादा हैं और सुख कम है । दो रोटी के लिये मनुष्य सारा जीवन खटपट में बिता देता है । हमें कोई खटपट न हो, आराम से भोग भोगें, हम पर कोई जिम्मेदारी न हो, हमें खूब सुख मिले ऐसी हम पर दया कर दो । हे प्रभु ! हे दीनबंधु ! हे दीनानाथ ! मेरी डोरी तेरे हाथ ।''

भक्त प्रार्थना दोहराते गये । फिर महाराजजी आगे कहने लगे : ''हे भगवान ! ये इन्कमटैक्स की, सेलटैक्स की, बच्चों की शादी की चिंता आदि से बचाना । अब हमें दुबारा मनुष्य जन्म न मिले ऐसी दया करना । हे कृपानिधि ! इन सब झंझटों से बचने के लिये कृपा करके दूसरे जन्म में, हमें सूअर-गधा-घोड़ा बना देना ।''

सबने फटाक से आँखें खोल दीं और कहा : ''महाराजजी ! ये आप क्या कह रहे हैं ?''

महाराजजी : ''आप लोगों को तो संसार से विकारों का मजा ही लेना है तो फिर इसमें मनुष्य जन्म की क्या जरूरत ? इसमें कितनी जिम्मेदारियाँ और परेशानियाँ हैं ? सूअर, गधा, घोड़ा बन गये तो फिर न शादी की चिंता, न बच्चों की जिम्मेदारी, न इन्कमटैक्सवालों की परेशानी । बस, भोग ही भोग... मजा ही मजा... है न ?''

''आप लोगों को तो संसार से विकारों का मजा ही लेना है तो फिर इसमें मनुष्य जन्म की क्या जरूरत ? इसमें कितनी जिम्मेदारियाँ और परेशानियाँ हैं ? सूअर, गधा, घोड़ा बन गये तो फिर न शादी की चिंता, न बच्चों की जिम्मेदारी, न इन्कमटैक्सवालों की परेशानी । बस, भोग ही भोग, मजा ही मजा... है न ?''

सबकी आँखें खुल गईं । वे महाराजजी को हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगे : ''महाराजजी ! यह तो बरबादी है । हमें क्षमा कीजिए । हमने अनमोल मनुष्य जन्म तो पाया परंतु आज तक तो उसे धन, पद-प्रतिष्ठा के पीछे गँवाते रहे । आँख, कान, नाक, जीभ को सुख दिलाने में बरबाद करते रहे । अब हम ऐसा नहीं करेंगे । आपकी कृपा से अब हम सावधान हुए हैं । जैसे, मकड़ी खुद जाला बुनती है और खुद ही उसमें फँस जाती है ऐसे ही हम भोगों की वासना में उलझ गये थे । अत: आप आशीर्वाद दीजिए ताकि अब हम दृढ़ निश्चयपूर्वक उससे बाहर निकलने का प्रयत्न कर सकें ।''

भोग भोगकर जो बुद्धि स्थूल हो गयी हो उसे सूक्ष्म बना लो और मोक्ष की अनुभूति के लिए उत्सुक हो जाओ । इसके लिए वृत्ति को सूक्ष्म करना पड़ेगा ।

तब महाराजजी ने कहा : ''यह अच्छी बात है कि आप सावधान हुए हैं, वरना भोगों की खाई में गिरकर वापस लौटना मुश्किल हो जाता है । जैसे, चूहा गेहूँ की कोठी में छेद करके भीतर घुस जाये और गेहूँ खाकर जब फिर से बाहर आना चाहे तो जिस छेद से भीतर गया था, उसी छेद से बाहर नहीं आ सकता है । मोटेपन के कारण वह वहीं फँस जाता है । इसी प्रकार यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो तो भोगों में समय बरबाद मत करो और अभी से प्रयत्नशील हो जाओ । जैसे

(शेष पृष्ठ ६ पर)

कुप्रचार से हानि संतों को नहीं, समाज को है...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

किसी व्यक्ति ने एक महात्मा के पास जाकर कहा :

''बाबाजी ! सनातन धर्म के प्रति कुप्रचार करनेवाले लोग कहते हैं कि 'रामायण सच्ची नहीं है ।' वे लोग अपना उल्लू सीधा करते हैं यह तो हम जानते हैं लेकिन बाबाजी ! जब हम बार-बार सुनते हैं तो कभी-कभी लगता है कि यह बात सच्ची है क्या ?''

वे एक सुलझे हुए महात्मा थे । वे बोले : ''मैं यह तो नहीं जानता कि रामायण सही है या गलत लेकिन इससे मेरा जीवन सही हो गया है और जो इसका अध्ययन करता है उसका जीवन सही होता है । यही प्रमाण सच्चा है । रामायण के अनुकरण से मेरे कुटुंब में स्नेह बढ़ गया है, भाई-भाई में, पति-पत्नी में, पिता-पुत्र में मर्यादा और स्नेह बढ़ गया है । अत: रामायण के विषय में 'वह सही है या गलत' - यह सोचना ही बेवकूफी है ।''

> *''रामायण के अनुकरण से मेरे कुटुंब में स्नेह बढ़ गया है, भाई-भाई में, पति-पत्नी में, पिता-पुत्र में मर्यादा और स्नेह बढ़ गया है ।''*

अगर दोषदृष्टि से ही देखना हो तो भगवान श्रीकृष्ण में दुर्गुण दिख जायेंगे पापी को और राम में भी दोष दिख जायेंगे, संत-महापुरुषों में भी दोष दिख जायेंगे निगुरों को । अगर निंदा ही करनी हो तो कोई भी निमित्त उत्पन्न करके आरोप लगाने लगेंगे निंदक...

> *''जिन लोगों को मेरे प्रति प्रेम है और जो मेरे स्वभाव को जानते-मानते हैं, वे लोग यदि ऐसे कुप्रचार करनेवाले हजार लोग और भी बढ़ जायें, तब भी विचलित होनेवाले नहीं हैं ।''*

कवि गेटे एक सज्जन व्यक्ति थे । उनकी एक पुस्तक सज्जनों को तो बहुत अच्छी लगी किन्तु जरूरी नहीं है कि अच्छी बात सभी को अच्छी लगे । अत: कुछ निंदकों ने कवि गेटे पर ऐसे-ऐसे आरोप लगाने शुरू किये, जिसे सुनकर गेटे के प्रशंसकों को आघात लगा कि 'इतने महान् कवि के लिए यह क्या अनर्गल बोला जा रहा है ?' अत: कुछ सज्जन लोग मिलकर कवि गेटे के पास आये और बोले :

''आपकी पुस्तक अत्यंत बढ़िया है फिर भी आरोपियों ने उसकी धज्जियाँ उड़ायी हैं । उनकी नीच वृत्ति आपके श्रेष्ठ कार्य को नहीं देख सकती अत: अगर आप संकेत करें तो हम उनके आरोपों का मुँहतोड़ जवाब दे देवें ।''

तब गेटे ने कहा : ''जिन लोगों को मेरे प्रति प्रेम है और जो मेरे स्वभाव को जानते-मानते हैं, वे लोग यदि ऐसे कुप्रचार करनेवाले हजार लोग और भी बढ़ जायें, तब भी विचलित होनेवाले नहीं हैं । जिसने मुझे नजदीक से देखा है, उसकी मेरे प्रति श्रद्धा, कितना भी कुप्रचार होने पर भी कम नहीं होगी । वह कुप्रचार का शिकार नहीं बनेगा । बैठो, मैं आप लोगों को एक कविता सुनाता हूँ ।''

कवि गेटे ने उनको टॉल्स्टॉय की एक कविता सुनायी, जिसका आशय था : 'जब कोई तुम्हारी कड़ी आलोचना करता है, तब तुम्हें यह स्मरण रखना चाहिए कि तुम्हारा फूल सुविकसित है इसीलिए भौंरे डंक मारने आ रहे हैं । इसी प्रकार जब तुम्हें निंदकों के डंक लगने लगें तो समझ लेना कि तुम्हारा कार्य सुविकसित हुआ है । अर्धविकसित फूल पर भ्रमर

कहाँ बैठता है ?'

इसीलिए जब आलोचक अनाप-शनाप आलोचना करने लगें तब तुम्हें संतोष मानना चाहिए कि तुम्हारा पुरुषार्थ और सेवाकार्यरूपी पुष्प इतना सुविकसित हुआ है कि उन बेचारों को तकलीफ हो रही है... हालाँकि तुम्हारा इरादा उन्हें तकलीफ देने का नहीं है ।

> *जब कोई तुम्हारी कड़ी आलोचना करता है, तब तुम्हें यह स्मरण रखना चाहिए कि तुम्हारा फूल सुविकसित है इसीलिए भौंरे डंक मारने आ रहे हैं ।*

लेकिन हाँ, तुम सावधान जरूर रहना । श्रद्धाहीन व्यक्तियों के चक्कर में आकर अपनी श्रद्धा को कभी ढीला मत करना, सत्संग मत छोड़ना, ध्यान-भजन, जप-स्वाध्यायादि का त्याग मत करना । जैसे दमा, टी. बी. आदि से ग्रस्त मरीज की हम सेवा तो करते हैं लेकिन उसके कीटाणु हमें न लगें इस बात की सावधानी भी रखते हैं। ऐसे ही जो अश्रद्धा के कीटाणु से ग्रस्त हो रहे हों, ऐसे लोगों से बचकर रहना । यदि ऐसे लोगों के बीच रहे, उनकी 'हाँ' में 'हाँ' मिलाते रहे तो फिर तुम्हारी श्रद्धा को भी आँच आने लगेगी और ध्यान-भजन में रुचि कम होती जायेगी ।

> *उन बातों से और संसर्ग से बचो जो तुम्हारी श्रद्धा, भक्ति और प्रेमरस को सुखाते हों । उन्हीं का अवलंबन लो जिनसे तुम्हारे हृदय में श्रद्धा, भक्ति और प्रेम का स्रोत प्रगट होने में मदद मिले ।*

उन व्यक्तियों से, उन वस्तुओं से, उन परिस्थितियों से, उन बातों से और संसर्ग से बचो जो तुम्हारी श्रद्धा, भक्ति और प्रेमरस को सुखाते हों । उन्हीं व्यक्तियों, वस्तुओं और परिस्थितियों का अवलंबन लो जिनसे तुम्हारे हृदय में श्रद्धा, भक्ति और प्रेम का स्रोत प्रगट होने में मदद मिले । श्रीकृष्ण कहते हैं :

> *हो सके तो भगवान् के भक्तों की सेवा करो अन्यथा किनारे रहो, किन्तु उन्हें सताओ मत । यदि तुम सताओगे तो तुम्हारा सताना वे तो थोड़ा सह लेंगे लेकिन श्रीहरि की प्रकृति जब करवट लेगी तो बहुत-बहुत भारी पड़ जायेगी ।*

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥

श्रद्धालु ही उस परम ज्ञान को पाता है और ज्ञान से परम शांति का अनुभव यहीं कर लेता है ।

सुधन्वा के पिता, चम्पकपुरी के नरेश हंसध्वज ने एक बार अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को पकड़कर बाँध दिया तथा राजगुरु शंख एवं लिखित की आज्ञा से यह घोषणा कर दी गयी कि नियत समय तक सब योद्धा रणक्षेत्र में उपस्थित हो जायें । जो ठीक समय पर नहीं पहुँचेगा, उसे उबलते हुए तेल के कढ़ाहे में डाल दिया जायेगा ।

आदेश का पालन करते हुए बाकी के सब योद्धा एवं अन्य राजकुमार तो निश्चित समय पर पहुँच गये, किन्तु सबसे छोटे राजकुमार सुधन्वा किसी कारणवश नहीं पहुँच सके । भक्त सुधन्वा को थोड़ी देर हो गयी अतः आज्ञा के मुताबिक सुधन्वा को खौलते कढ़ाहे में डाला गया, किन्तु हरिचिंतन के प्रभाव से सुधन्वा का बाल तक बाँका न हुआ ।

सुधन्वा जान गये थे कि 'मेरे पिता को चढ़ाने-भड़कानेवाले दो मंत्री हैं : शंख और लिखित । इन दोनों के कारण मेरे पिता को इतना क्रोध आ गया है ।' सुधन्वा भगवद्भक्त तो थे ही, प्रभु पर उनकी अनन्य श्रद्धा थी अतः उन्होंने प्रार्थना की : 'यदि मैं निष्कपट भाव से हरि को अपना और अपने को हरि का मानता हूँ तो हरि सर्वत्र हैं, वे मेरी सहायता करें...'

सुधन्वा के लिए तेल शीतल हो गया और उनका

(शेष पृष्ठ २५ पर)

कर खिजमत फकीरों की...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

दो राजकुमार थे । बड़ा भाई राज्य के मोह में पड़ गया लेकिन छोटा भाई सच्ची आजादी पाने के लिए सच्चे सद्गुरु की खोज में निकल गया और उसने खोजते-खोजते ऐसे सत्यस्वरूप का साक्षात्कार किये हुए सच्चे सद्गुरु को पा भी लिया । नानक और कबीर जैसे महापुरुष को पाकर, उनके बताये मार्ग अनुसार साधना करके उसने अपने शुद्ध बुद्ध स्वरूप का ज्ञान पा लिया । फिर वह घूमते-घामते अपने भाई के नगर में पहुँचा और नगर के बाहर नदी के किनारे अपनी झोंपड़ी बाँधकर रहने लगा । उसका जगमगाता आनंद, हारे-थके को सांत्वना देने का स्वभाव, भगवद्-प्रेम में पावन करनेवाली उसकी शैली, दिल में मनुष्यमात्र के उद्धार का पवित्र भाव, परिस्थितियों में सम रहने की उसकी समर्थ मति, उस बहादुर को, संत बने भाई को अब छुपा कैसे रहने देती ?

बड़ा भाई राज्य के मोह में पड़ गया लेकिन छोटा भाई सच्ची आजादी पाने के लिए सच्चे सद्गुरु की खोज में निकल गया और ऐसे सच्चे सद्गुरु को पा लिया । उनके बताये मार्ग अनुसार साधना करके उसने अपने शुद्ध-बुद्ध स्वरूप का ज्ञान पा लिया ।

सच्चा बहादुर वह नहीं जो किसीको पछाड़ देता है । सच्चा बहादुर तो वही है जिसने भीतर के विकारों पर विजय पाकर अपने निर्विकारी नारायणस्वरूप का साक्षात्कार किया है । उस ब्रह्म-परमात्मा को अपना स्वरूप जाननेवाला सचमुच में बहादुर है, महावीर है । जैसे नानकजी महावीर हैं, महान् वीर हैं । बड़े-बड़े वीर भी जिनके चरणों में शीश झुकाकर अपना भाग्य बना लें, ब्रह्मज्ञानी ऐसे महान् वीर होते हैं । वह महावीर भी प्रजा का प्रेमपात्र बन गया ।

आत्मा में रमण करनेवाले संत किसी मत, पंथ, मजहब का पोषण या विरोध नहीं करते वरन् वे तो मानव के अंदर छुपे हुए रब को, आनंद को और माधुर्य को जगाने की कला जानते हैं ।

मुझे वेद, पुराण, कुरान से क्या ?
मुझे प्रेम का पाठ पढ़ा दे कोई ॥
मुझे मंदिर-मस्जिद जाना नहीं ।
मुझे दिल के मंदिर में पहुँचा दे कोई ॥
जहाँ ऊँच और नीच का भेद नहीं ।
जहाँ जात और पाँत की बात नहीं ॥
न हो मंदिर, मस्जिद, चर्च जहाँ ।
न हो पूजा नमाज में फर्क जहाँ ॥
बस प्रेम ही प्रेम की सृष्टि मिले ।
अब नाव को ले चलो खेके वहाँ ॥

ऐसे कुछ पवित्र जिज्ञासु उस फकीर के पास पहुँच जाते थे, जो भूतपूर्व युवराज था ।

धीरे-धीरे राज-दरबार तक उस फकीर की प्रशंसा पहुँची । जासूसों ने जाँच करके राजा को खबर दी : ''ये महाराज कोई और नहीं किंतु आपके ही सगे भाई हैं ।'' राजा के अहंकार को ठेस लगी : ''मेरा भाई ! और झोंपड़े में रहे ? भिक्षा माँगकर खाये ?''

एक दिन राजा सुबह-सुबह छिपे वेश में आकर अपने भाई को समझाने लगा : ''मैं इतनी आजाद जिंदगी जी रहा हूँ और एक तू है कि रोटी का टुकड़ा माँगने निकलता है ? मैं महलों में रहता हूँ और तू झोंपड़े में गुजारा कर रहा है ? तू क्यों बर्बादी की आग में जल रहा है ? चल मेरे साथ । मैं तुझे मंत्रीपद दे दूँगा । मेरी आज्ञा में रहेगा तो मैं तुझे खुश

रखूँगा । देख ! मैं कितना आजाद हूँ । सब लोग मेरी बात मानते हैं ।''

बुद्धिमान छोटे भाई ने कहा :

''भैया ! अहंकार को पोसना आजादी नहीं है । कुर्सी को पाकर, गद्दी को पाकर अपने को बड़ा माना तो तुमने अपने असली बड़प्पन को दबा दिया । यह बड़प्पन तुम्हारा नहीं, कुर्सी का हुआ । यदि धन को पाकर अपने को बड़ा माना तो तुमने अपने बड़प्पन को दबाकर धन को बड़प्पन दिया । सत्ता, धन, रूप-लावण्य अथवा शरीर का बड़प्पन मानना यह तो असली बड़प्पन का घात करना है । तुमने इन चीजों को बड़ा कर दिया और अपने को दबा दिया, फिर अपने को आजाद मानते हो ?''

सच्चा बहादुर वह नहीं जो किसीको पछाड़ देता है । सच्चा बहादुर तो वही है जिसने भीतर के विकारों पर विजय पाकर अपने निर्विकारी नारायणस्वरूप का साक्षात्कार किया है ।

लेकिन राजगद्दी के नशे में चूर भाई ने कहा :

''छोड़ ये बातें । आखिर तू मेरा छोटा भाई है ।''

ऐसे ही मेरा भाई भी मुझे कहता था कि : ''सुधर जा । मैं तुझे हिस्सा देता हूँ । तू आराम से, मौज से रह । दो भाई तो हैं- एक ही पिता के दो बेटे हैं और तू एक कमरे में रात को बारह-बारह बजे तक बैठा रहता है ! दुकान पर पैर नहीं रखता ! अब तो सुधर जा ।'' गुरु-प्रसाद पाकर सात साल तपस्या के बाद जब हम अहमदाबाद पहुँचे, तब भी भाई ने पहला वचन यही कहा : ''सात साल तू चला गया, फिर भी जो कमाई हुई है उसका आधा हिस्सा मैं तेरे को देता हूँ । अभी भी तू सुधर जा । मेरे साथ चल दुकान पर ।''

आत्मा में रमण करनेवाले संत किसी मत, पंथ, मजहब का पोषण या विरोध नहीं करते वरन् वे तो मानव के अंदर छुपे हुए रब को, आनंद को और माधुर्य को जगाने की कला जानते हैं ।

मैंने कहा : ''हम तो बिगड़ गये ।''

सुनो मेरे भाइयो ! सुनो मेरे मितवा !
कबीरो बिगड़ गयो रे...
दही संग दूध बिगड़यो, मक्खन रूप भयो रे...
पारस संग भाई ! लोहा बिगड़यो, कंचन रूप भयो रे...
संतन संग दास कबीरो बिगड़यो
संत कबीर भयो रे, कबीरो बिगड़ गयो रे...

दुनियादार जिस भक्त को बिगड़ा समझते हैं, वास्तव में वह ऐहिक सृष्टि में तो बिगड़ा दिखता है परंतु यदि उसका दिव्य सृष्टि में प्रवेश हुआ है और वह दिव्य सृष्टि में भी न रुके तो उस ब्रह्म-परमात्मा में शांति पा लेता है । बुद्धिमत्ता यही है कि सच्ची आजादी पाये हुए ऐसे महापुरुषों की चरणरज सिर पर लगाकर अपना भाग्य बना लें । यही आजादी का सच्चा स्वरूप है । लेकिन वह राजा अपने राजसी नशे में था ।

बड़े भाई ने छोटे भाई से कहा : ''मैं इतना आजाद हूँ... मेरी बात सब लोग मानते हैं और तू झोंपड़ी में जिंदगी बसर कर रहा है ! तू मेरी बात क्यों नहीं मानता है ?''

''सब तुम्हारी बात मानते हैं ?''

''हाँ, मानते हैं । मैं चाहे जो मँगा सकता हूँ । मेरी हुकूमत सब पर चलती है ।''

''मैं इतनी आजाद जिंदगी जी रहा हूँ और एक तू है कि रोटी का टुकड़ा माँगने निकलता है ? मैं महलों में रहता हूँ और तू झोंपड़े में गुजारा कर रहा है ?''

उस वक्त छोटा भाई गुदड़ी सी रहा था । उसने सिलाई करते-करते सूई-धागा उठाकर नदी में फेंक दिया और बोला : ''सब लोग तुम्हारी बात मानते हैं तो जरा सूई-धागा नदी से निकलवा दो ।''

राजा : ''यह तो नहीं हो सकता ।''

''जब तुम्हारे हुक्म से एक छोटी-सी सुई भी नदी में से नहीं निकल सकती तो तुम किस बात के सम्राट हो ? किस बात के राजा हो ?''

बड़े भाई ने कहा : ''तो क्या तुम्हारी बात सब मानते हैं ?''

बुद्धिमत्ता यही है कि सच्ची आजादी पाये हुए ऐसे महापुरुषों की चरणरज सिर पर लगाकर अपना भाग्य बना लें । यही आजादी का सच्चा स्वरूप है ।

तब छोटे भाई ने योगशक्ति का उपयोग किया । थोड़ी ही देर में एक मछली मुँह में सुई-धागा लटकाते हुए वहाँ तैरने लगी । छोटे भाई ने धागा पकड़कर सूई दिखाई और बोला : ''देख, अब तू आजाद है कि मैं आजाद हूँ ? तू ही सोच । फिर भी तू अपने को आजाद समझता है और मुझे बर्बाद समझता है तो...

तेरी आजादियाँ सदके सदके ।
मेरी बर्बादियाँ सदके सदके ॥
मैं बर्बादे तमन्ना हूँ ।
मुझे बर्बाद रहने दो ॥

छोटे भाई ने योगशक्ति का उपयोग किया । थोड़ी ही देर में एक मछली मुँह में सूई-धागा लटकाते हुए वहाँ तैरने लगी ।

मेरी वासनाएँ बर्बाद हो गयीं, मेरा अहंकार बर्बाद हो गया, मेरी चिंता बर्बाद हो गयी, मेरा बँधन बर्बाद हो गया । सचमुच में मेरी जो बर्बादी है उसे मैं प्यार करता हूँ और तेरी जो आजादी है, उसे मैं दुआ करता हूँ । तू वहाँ भला है और मुझे यहीं रहने दे, अपनी मौज में ।''

जिसने तीन मिनट के लिए भी, एक बार अपने आत्मा-परमात्मा का सुख पा लिया, उसके आगे इन्द्रदेव तक हाथ जोड़कर अपना भाग्य बनाने को उत्सुक होते हैं तो एक सामान्य मछली की तो बात ही क्या है ? अगर पाना हो उस आत्मा-परमात्मा के सुख को तो पहुँच जाओ किसी ब्रह्मवेत्ता के द्वार पर... और उनके दैवी कार्य व सेवा-सत्संग से बना लो अपना भाग्य । किसीने ठीक ही कहा है :

अगर है शौक मिलने का
तो कर खिजमत फकीरों की ।
यह जौहर नहीं मिलता
अमीरों के खजाने में ॥

(पृष्ठ १६ का शेष)

मनुष्य अविद्या के कारण किसी कल्पना में, किसी मान्यता में, किसी धारणा में बँधा हुआ होता है । पहले वह तमस में, आसुरी भाव में बँध जाता है । आसुरी भाव निकलता है तो राजस भाव में बँध जाता है । धन तो बैंक में होता है और मनुष्य मानता है 'मैं धनवान ।' पुत्र तो कहीं घूम रहे हैं और मानता है 'मैं पुत्रवान ।' फिर 'मैं त्यागी... मैं तपस्वी... मैं भोगी... मैं रोगी... मैं सिंधी... मैं गुजराती...' इसमें मनुष्य बँध जाता है । उससे थोड़ा आगे निकलता है तो 'मैं कुछ नहीं मानता... जात-पाँत में नहीं मानता... मैं किसी पंथ में नहीं मानता ।' इस तरह 'न माननेवाले' में बँध जाता है ।

ऐसा जीव न जाने किस गली से निकलकर किस गली में फँस जाता है ! किस भाव से छूटकर किस भाव में बँध जाता है ! लेकिन जब जीव को, मनुष्य को निर्बंध पुरुष, सद्गुरु मिल जाते हैं तो वह उनकी कृपा से सब बँधनों से मुक्त हो जाता है, उसकी अविद्या दूर हो जाती है और वह ज्ञानस्वरूप परमात्मा में प्रतिष्ठित हो जाता है । वह ब्रह्मवेत्ता हो जाता है ।

पूर्ण स्वस्थ व निरंतर काम में प्रवृत्त रहने का रहस्य चित्त को सदा हल्का और प्रसन्न रखने में है... चित्त को कभी भी थका-माँदा, कभी भी उत्तेजित, कभी भी भय, शोक व चिंता से लदा हुआ रखने में नहीं है ।

- स्वामी रामतीर्थ

श्रद्धा सब धर्मों में जरूरी

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

'नारद पुराण' में आता है कि श्रद्धा से ही भगवान संतुष्ट होते हैं ।

श्रद्धापूर्णाः सर्वधर्मा मनोरथफलप्रदाः ।
श्रद्धया साध्यते सर्वं श्रद्धया तुष्यते हरिः ॥

'नारद ! श्रद्धापूर्वक आचरण में लाये हुए ही सब धर्म मनोवांछित फल देनेवाले होते हैं । श्रद्धा से ही सब कुछ सिद्ध होता है और श्रद्धा से भगवान श्रीहरि संतुष्ट होते हैं ।'

नेता को भी 'मैं जीत जाऊँगा...' यह श्रद्धा होती है तभी वह चुनाव में तत्पर होता है और सफल होता है । दुकानदार को भी श्रद्धा होती है कि 'दुकान चलाने में लाभ होगा... धंधा चलेगा...' तभी वह पगड़ी देकर दुकान खरीदता है और सफल होता है । विद्यार्थी को भी श्रद्धा होती है कि 'मैं पढूँगा और पास होऊँगा...।' हालाँकि सब विद्यार्थी पास नहीं होते हैं - १०० प्रतिशत विद्यार्थी पास नहीं होते हैं । कहीं ७० तो कहीं ८० प्रतिशत पास होते हैं तो २० या ३० प्रतिशत फेल भी होते हैं । अगर हजार विद्यार्थी परीक्षा में बैठें तो आठसौ पास होंगे लेकिन अगर आठसौ बैठें तो आठसौ पास नहीं होंगे । किन्तु हजार के हजार विद्यार्थी सोचते हैं कि 'हम तो पास हो जायेंगे' तभी ७००-८०० पास हो पायेंगे ।

परीक्षा में भी जो फेल होते हैं उन्हें कुछ तो ज्ञान मिलता ही है । ऐसे ही जो श्रद्धा से ईश्वर के रास्ते पर चल पड़ता है उसे पूर्णता की प्राप्ति होती है किन्तु कभी-कभार अगर इस जन्म में न भी हुई फिर भी उस साधक की साधना व्यर्थ नहीं जाती । स्वर्ग या ब्रह्मलोक का सुख-वैभव तो उसे मुफ्त में मिल ही जाता है और वह उस सुख का उपभोग करके पुनः किसी श्रीमान् के घर, किसी योगी के घर जन्म लेता है । बचपन से ही भोग-सामग्री के बीच होते हुए भी, पूर्वकाल की श्रद्धा के बल से किया हुआ भजन, दान-पुण्य एवं सत्कर्म उसके हृदय को उठाता जाता है और वह परम पद की, पूर्णता की प्राप्ति कर लेता है ।

जिसके जीवन में श्रद्धा नहीं है, उसका जीवन रसहीन हो जायेगा । फिर वह इंजेक्शनों एवं गोलियों से तन्दुरुस्ती माँगता फिरेगा, डिस्को और वाइन, सिगरेट, पान-मसाले (गुटखा) से प्रसन्नता माँगता फिरेगा और इधर-उधर के छोटे-मोटे अखबारों, नॉवेल-उपन्यास आदि में ज्ञान खोजता फिरेगा लेकिन जिसके जीवन में श्रद्धा है उसके अंतर में आत्मज्ञान प्रगटेगा, उसकी अंतरात्मा से आत्मसुख प्रगटेगा, उसकी अंतरात्मा से आरोग्यता के कण प्रगटेंगे और देर-सबेर अंतरात्मा की यात्रा करके वह परमात्म-पथ की यात्रा में भी सफल हो जायेगा ।

जिसके जीवन में श्रद्धा नहीं होगी वह तत्पर नहीं होगा, संयमी भी नहीं होगा, स्नेहवान् भी नहीं होगा । जिसके जीवन में श्रद्धा है उसके जीवन में तत्परता होगी, संयम होगा, रस होगा । जो लोग श्रद्धावान् का मजाक उड़ाते हैं, उनके लिए आचार्य विनोबा भावे कहते हैं : ''श्रद्धावान् को अंधश्रद्धालु कहना यह भी तो अंधश्रद्धा है ।''

अपने बाप पर भी तो श्रद्धा रखनी पड़ती है । जो श्रद्धावान् का मजाक उड़ाते हैं वे भी तो श्रद्धावान् हैं । 'यह मेरा बाप... यह मेरी जाति...' यह श्रद्धा से ही तो मानते हैं । पायलट पर, बसड्राईवर पर भी तो श्रद्धा रखनी पड़ती है । हालाँकि कई बार दुर्घटना भी हो जाती है ।

यहाँ भगवान कहते हैं : **श्रद्धापूर्णाः सर्वधर्मा...** सब धर्मों को श्रद्धा पूर्ण करती है, चाहे स्त्रीधर्म हो- जो स्त्री, पुरुष में साक्षात् नारायण का वास समझकर उसकी

सेवा करती है, अपनी इच्छा-वासनाओं को महत्त्व न देते हुए पति के संतोष में अपना संतोष मान लेती है, उस स्त्री के पातिव्रत्य धर्म में इतना सामर्थ्य आ जाता है जितना उसके पति में भी शायद न हो और यह सामर्थ्य आता है उसकी श्रद्धा से । विद्यार्थी का धर्म भी श्रद्धा से संपन्न होता है और चिकित्सक आदि का धर्म भी श्रद्धा से संपन्न होता है । यदि नकारात्मक विचार रखकर चिकित्सक इलाज करे या मरीज करवाये तो दोनों को हानि होगी । अतः श्रद्धा, तत्परता सब धर्मों में चाहिए, सब कर्मों में चाहिए ।

श्रद्धापूर्णाः सर्वधर्मा मनोरथफलप्रदाः ।
श्रद्धया साध्यते सर्वं श्रद्धया तुष्यते हरिः ॥

'नारद ! श्रद्धापूर्वक आचरण में लाये हुए ही सब धर्म मनोवांछित फल देनेवाले होते हैं । श्रद्धा से सब कुछ सिद्ध होता है और श्रद्धा से ही भगवान् श्रीहरि संतुष्ट होते हैं ।'

श्रद्धा से साधक में तत्परता आती है, श्रद्धा से ही मन-इंद्रियों पर संयम किया जाता है और श्रद्धा से ही परमात्मस्वरूप की प्राप्ति होती है । श्रद्धा से उत्तम गुण उत्पन्न होते हैं और श्रद्धा से ही उत्तम रस की प्राप्ति होती है ।

राजा द्रुपद ने संतान-प्राप्ति के लिए श्रद्धा से भगवान शिव की आराधना की । शिव की आराधना का फल हुआ कि राजा द्रुपद को संतान तो प्राप्त हुई किन्तु कन्या के रूप में ।

तब राजा द्रुपद ने पुनः आराधना की जिससे प्रसन्न होकर भगवान शिव प्रगट हुए । तब राजा ने प्रार्थना की : ''भगवन् ! मैंने तो संतान अर्थात् पुत्र की प्राप्ति के लिए आराधना की थी लेकिन यह तो कन्या है ।''

शिवजी : ''हमारी दी हुई वस्तु को तुम प्रसाद समझकर स्वीकार करो । यह दिखती तो कन्या है लेकिन तुम इसे पुत्र ही समझो ।''

राजा द्रुपद ने भगवान के वचनों पर श्रद्धा की । उस कन्या का कन्यापरक नाम नहीं रखा परंतु पुत्रपरक नाम- शिखण्डी रखा। उसके संस्कार भी पुत्र के अनुसार थे । जब वह युवती हुई तब उसे युवक मानकर किसी कन्या से उसकी शादी करवा दी । श्रद्धा के बल से बाद में वह कन्या पुत्र के रूप में बदल गयी, शिखण्डी पुरुष हो गया । आज भी कभी-कभी आप सुनते हैं कि लड़की में से लड़का हो गया ।

यह सब परिणाम है दृढ़ श्रद्धा का । दृढ़ श्रद्धा असंभव को भी संभव करने में सक्षम है ।

(पृष्ठ २० का शेष)

एक रोम तक न झुलसा ! लोगों को आश्चर्य हुआ कि यहाँ कोई षड़यंत्र तो नहीं है । तब कढ़ाहे में नारियल फेंका गया और ज्यों-ही नारियल कढ़ाहे में गिरा, त्यों-ही दो टुकड़े होकर इतने जोर से उछला कि एक टुकड़ा दूर खड़े शंख के सिर पर और दूसरा टुकड़ा लिखित के सिर पर जा गिरा ।

दोनों को परिचय मिल गया कि श्रद्धावान् भक्तों के जीवन में हस्तक्षेप करने का परिणाम बड़ा खतरनाक होता है ।

संत सताये तीनों जाये तेज बल और वंश ।
ऐडा ऐडा कई गया रावण कौरव केरो कंस ॥

हो सके तो भगवान के भक्तों की सेवा करो अन्यथा किनारे रहो, किन्तु उन्हें सताओ मत । यदि तुम सताओगे तो तुम्हारा सताना वे तो थोड़ा सह लेंगे लेकिन श्रीहरि की प्रकृति जब करवट लेगी तो बहुत-बहुत भारी पड़ जायेगी ।

(पृष्ठ १४ का शेष)

और सद्गुण के महान् फायदों पर नजर डालो । केवल मंदिरों में जाने से या माला घुमाने से ही काम नहीं चलता अपितु रोज थोड़े दुर्गुण हटाते जाओ और थोड़े सद्गुण भरते जाओ । इससे आप शान्ति, प्रसन्नता, संतोष, आरोग्यता, उत्साह आदि सद्गुणों के धनी बन जाओगे ।

जैसे खेत में निंदाई-गुड़ाई करते हैं, वैसे ही मनरूपी खेत में से हल्के विचार निकालकर दिव्य विचार भरने का रोज अभ्यास करो । मस्तिष्क की तिजौरी में जितने दिव्य विचार भरते जाओगे, दृढ़, बनाते जाओगे, उतने ही सच्चे अर्थों में आप धनवान् बनते जाओगे । वास्तव में तुम ईश्वर की सनातन संतान हो । बुरी आदतों में फँस मरने के लिए तुम्हारा जन्म नहीं हुआ है ।

ॐ... ॐ... ॐ...

सेवा करती है, अपनी इच्छा-वासनाओं को महत्त्व न देते हुए पति के संतोष में अपना संतोष मान लेती है, उस स्त्री के पातिव्रत्य धर्म में इतना सामर्थ्य आ जाता है जितना उसके पति में भी शायद न हो और यह सामर्थ्य आता है उसकी श्रद्धा से । विद्यार्थी का धर्म भी श्रद्धा से संपन्न होता है और चिकित्सक आदि का धर्म भी श्रद्धा से संपन्न होता है । यदि नकारात्मक विचार रखकर चिकित्सक इलाज करे या मरीज करवाये तो दोनों को हानि होगी । अत: श्रद्धा, तत्परता सब धर्मों में चाहिए, सब कर्मों में चाहिए ।

श्रद्धापूर्णाः सर्वधर्मा मनोरथफलप्रदाः ।
श्रद्धया साध्यते सर्वं श्रद्धया तुष्यते हरिः ॥

'नारद ! श्रद्धापूर्वक आचरण में लाये हुए ही सब धर्म मनोवांछित फल देनेवाले होते हैं । श्रद्धा से सब कुछ सिद्ध होता है और श्रद्धा से ही भगवान् श्रीहरि संतुष्ट होते हैं ।'

श्रद्धा से साधक में तत्परता आती है, श्रद्धा से ही मन-इंद्रियों पर संयम किया जाता है और श्रद्धा से ही परमात्मस्वरूप की प्राप्ति होती है । श्रद्धा से उत्तम गुण उत्पन्न होते हैं और श्रद्धा से ही उत्तम रस की प्राप्ति होती है ।

राजा द्रुपद ने संतान-प्राप्ति के लिए श्रद्धा से भगवान शिव की आराधना की । शिव की आराधना का फल हुआ कि राजा द्रुपद को संतान तो प्राप्त हुई किन्तु कन्या के रूप में ।

तब राजा द्रुपद ने पुन: आराधना की जिससे प्रसन्न होकर भगवान शिव प्रगट हुए । तब राजा ने प्रार्थना की : ''भगवन् ! मैंने तो संतान अर्थात् पुत्र की प्राप्ति के लिए आराधना की थी लेकिन यह तो कन्या है ।''

शिवजी : ''हमारी दी हुई वस्तु को तुम प्रसाद समझकर स्वीकार करो । यह दिखती तो कन्या है लेकिन तुम इसे पुत्र ही समझो ।''

राजा द्रुपद ने भगवान के वचनों पर श्रद्धा की । उस कन्या का कन्यापरक नाम नहीं रखा परंतु पुत्रपरक नाम- शिखण्डी रखा। उसके संस्कार भी पुत्र के अनुसार थे । जब वह युवती हुई तब उसे युवक मानकर किसी कन्या से उसकी शादी करवा दी । श्रद्धा के बल से बाद में वह कन्या पुत्र के रूप में बदल गयी, शिखण्डी पुरुष हो गया । आज भी कभी-कभी आप सुनते हैं कि लड़की में से लड़का हो गया ।

यह सब परिणाम है दृढ़ श्रद्धा का । दृढ़ श्रद्धा असंभव को भी संभव करने में सक्षम है ।

(पृष्ठ २० का शेष)

एक रोम तक न झुलसा ! लोगों को आश्चर्य हुआ कि यहाँ कोई षड़यंत्र तो नहीं है । तब कढ़ाहे में नारियल फेंका गया और ज्यों-ही नारियल कढ़ाहे में गिरा, त्यों-ही दो टुकड़े होकर इतने जोर से उछला कि एक टुकड़ा दूर खड़े शंख के सिर पर और दूसरा टुकड़ा लिखित के सिर पर जा गिरा ।

दोनों को परिचय मिल गया कि श्रद्धावान् भक्तों के जीवन में हस्तक्षेप करने का परिणाम बड़ा खतरनाक होता है ।

संत सताये तीनों जाये तेज बल और वंश ।
ऐड़ा ऐड़ा कई गया रावण कौरव केरो कंस ॥

हो सके तो भगवान के भक्तों की सेवा करो अन्यथा किनारे रहो, किन्तु उन्हें सताओ मत । यदि तुम सताओगे तो तुम्हारा सताना वे तो थोड़ा सह लेंगे लेकिन श्रीहरि की प्रकृति जब करवट लेगी तो बहुत-बहुत भारी पड़ जायेगी ।

(पृष्ठ १४ का शेष)

और सद्‌गुण के महान् फायदों पर नजर डालो । केवल मंदिरों में जाने से या माला घुमाने से ही काम नहीं चलता अपितु रोज थोड़े दुर्गुण हटाते जाओ और थोड़े सद्‌गुण भरते जाओ । इससे आप शान्ति, प्रसन्नता, संतोष, आरोग्यता, उत्साह आदि सद्‌गुणों के धनी बन जाओगे ।

जैसे खेत में निंदाई-गुड़ाई करते हैं, वैसे ही मनरूपी खेत में से हल्के विचार निकालकर दिव्य विचार भरने का रोज अभ्यास करो । मस्तिष्क की तिजौरी में जितने दिव्य विचार भरते जाओगे, दृढ़, बनाते जाओगे, उतने ही सच्चे अर्थों में आप धनवान् बनते जाओगे । वास्तव में तुम ईश्वर की सनातन संतान हो । बुरी आदतों में फँस मरने के लिए तुम्हारा जन्म नहीं हुआ है ।

ॐ... ॐ... ॐ...

पू. बापू के सत्संग-कार्यक्रम

(१) उज्जैन में महाशिवरात्रि ध्यान योग शिविर : ६ से ९ मार्च । संत श्री आसारामजी गुरुकुल न्यास, सांदीपनि आश्रम के पास, मंगलनाथ रोड । फोन : ५५५५५२, ५५७८१७, ५६१२८९. (२) खरगोन (म. प्र.) में ११ और १२ मार्च ९७. सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३-३० से ५-३०. टेलिफोन ऑफिस के सामने, डायवर्सन रोड़। फोन : (०७२८२) ३२७१५, ३३०७६, ३३०५०, ३२५८२. (३) धड़गाँव (जि. धुलिया, महा.) में दिव्य सत्संग समारोह एवं विशाल भंडारा : १३ मार्च ९७. सुबह १० से १२. मानसिंह स्टेडियम, मैन रोड । फोन : (०२५९५) २०२०६, २०२५१. (४) नंदुरबार (महा.) में : १४ से १६ मार्च ९७. सुबह ९-३० से १२. शाम ३-३० से ६. आई. टी. आई. कॉलेज मैदान, शनि मंदिर के पास । फोन : (०२५६४) २२२३३, २२९३६, २२५२२. (५) उल्हासनगर में : ता.१७ मार्च शाम ५ से ७. ता. १८ और १९ मार्च सुबह ७-३० से ९-३०. शाम ५ से ७. गोल मैदान । आश्रम फोन : (०२५१) ५४२६९६. (६) सूरत आश्रम में होली का वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर : २१ से २४ मार्च ९७. संत श्री आसारामजी आश्रम, वरियाव रोड़, जहाँगीरपुरा, सूरत-५. फोन : ६८५३४१. (७) अहमदाबाद आश्रम में चेटीचंड का वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर : ६ से ८ अप्रैल ९७. संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद-५. फोन : ७४८६३१०, ७४८६७०२. (८) दिल्ली में १२ और १३ अप्रैल ९७. पीतमपुरा, दिल्ली । आश्रम फोन : ५७२९३३८, ५७६४१६१.

उपहार योजना का लाभ लें

अपने परिचित एवं अन्य लोगों तक पूज्यश्री के सत्संग एवं मार्गदर्शन का लाभ 'ऋषि प्रसाद' द्वारा पहुँचाने हेतु सभी सेवाधारी भाइयों को उनके द्वारा बनाये गये १० वार्षिक सदस्यों पर अथवा १ आजीवन सदस्य पर १ वार्षिक सदस्यता उपहार दी जायेगी । पूर्व में घोषित अन्य सभी उपहार योजनाएँ निरस्त की जाती हैं ।

'ऋषि प्रसाद' के पाठकगण, सदस्यों एवं एजेन्ट बन्धुओं से निवेदन

(१) 'ऋषि प्रसाद' के पाठक रू. २०० जमा करवाकर पाँच साल के लिए भी सदस्य बन सकते हैं ।

(२) अपनी सदस्यता का नवीनीकरण कराते समय मनीऑर्डर फार्म पर 'संदेश के स्थान' पर 'ऋषि प्रसाद' के लिफाफे पर आया हुआ आपके पते वाला लेबल चिपका दें । (३) 'पाने वाले का पता' में 'ऋषि प्रसाद सदस्यता हेतु' अवश्य लिखें । (४) पते में किसी भी प्रकार के परिवर्तन की सूचना प्रकाशन तिथि से एक माह पूर्व भिजवावें अन्यथा परिवर्तन अगले अंक से प्रभावी होगा । (५) जिन सदस्यों को पोस्ट द्वारा अंक मिलता है उनको विनंती है कि अगर आपको अंक समय पर प्राप्त न हो तो पहले अपनी नजदीकवाली पोस्ट ऑफिस में ही पूछताछ करें । क्योंकि अहमदाबाद कार्यालय से सभी को समय पर ही अंक पोस्ट किये जाते हैं । पोस्ट ऑफिस में तलास करने पर भी अंक न मिले तो उस महीने की २० तारीख के बाद अहमदाबाद कार्यालय को जानकारी दें । (६) 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय से पत्रव्यवहार करते समय कार्यालय के पते के ऊपर के स्थान में संबंधित विभाग का नाम अवश्य लिखें । ये विभिन्न विभाग इस प्रकार हैं :

(A) अनुभव, गीत, कविता, भजन, संस्था समाचार, फोटोग्राफ्स एवं अन्य प्रकाशन योग्य सामग्री 'सम्पादक- ऋषि प्रसाद' के पते पर प्रेषित करें । **(B)** पत्रिका न मिलने तथा पते में परिवर्तन हेतु 'व्यवस्थापक-ऋषि प्रसाद' के पते पर संपर्क करें । **(C)** साहित्य, चूर्ण, कैसेट आदि प्राप्ति हेतु 'श्री योग वेदान्त सेवा समिति के पते पर संपर्क करें । **(D)** साधना संबंधी मार्गदर्शन हेतु 'साधक विभाग' पर लिखें । **(E)** स्थानीय समिति की मासिक रिपोर्ट, सत्प्रवृत्ति संचालन की जानकारी एवं समिति से संबंधित समस्त कार्यों के लिये 'अखिल भारतीय योग वेदान्त सेवा समिति' के पते पर लिखें । **(F)** स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्त प्रकार के पत्रव्यवहार 'वैद्यराज, साई लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड़, जहाँगीरपुरा, सूरत (गुजरात) के पते पर करें । (७) आप जो राशि भेजें वह इन विभागों के मुताबिक अलग-अलग मनीऑर्डर या ड्राफ्ट से ही भेजें । अलग-अलग विभाग की राशि एक ही मनीऑर्डर या ड्राफ्ट में कभी न भेजें ।

वेदान्त को व्यवहार में लाना सफलता का रहस्य है । व्यावहारिक वेदान्त ही सफलता की कुँजी है ।

- स्वामी रामतीर्थ

''राजा नहीं, राजाओं का गुरु होगा...''

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

राज-काज के नीति-नियमों को अच्छी तरह जाननेवाले पुरुषों में चाणक्य एक अच्छे और सफल राजनीतिज्ञ थे। उन्होंने राजनीति के विषय में जो कुछ कहा है उसे चाणक्यनीति कहते हैं। वे जब छोटे थे तब एक बार उनके घर कोई अतिथि आये। वे सामुद्रिक लक्षणों के ज्ञाता थे। वे किसी भी व्यक्ति के शरीर के अंगों की रचना पर से व्यक्ति के चरित्र और भविष्य के बारे में बता सकते थे।

उन्होंने चाणक्य के सभी सामुद्रिक लक्षण देखे। फिर उनके पिता को बताया : ''यह लड़का राजा होगा।''

चाणक्य के पिता ने पूछा : ''यह आपने कैसे जाना ?''

अतिथि : ''उसका अमुक दाँत इतना लम्बा है, कुछ और भी चिन्ह हैं जो उसके राजा बनने के लक्षण हैं।''

चाणक्य के पिता ने निःश्वास छोड़ते हुए कहा : ''मेरा बेटा राजा होगा ?''

कितना तप किया हुआ होता है, कितने पुण्य होते हैं तब आदमी राजा बनता है। लेकिन राजा अगर सावधानी नहीं रखता है तो भोगी बन जाता है और भोगी के लिये तो नरक है ही है। **तपेश्वरी राजेश्वरी। राजेश्वरी भोगेश्वरी। भोगेश्वरी नरकेश्वरी।**

पिता ने सोचा : ''मेरा बेटा भी अगर राजा बना और भोग-विलास में डूबा तो नरक में जाएगा।'' वे थोड़ी देर के लिये शांत हो गये। शांत मन में योग्य मार्गदर्शन मिलता है।

चाणक्य के पिता ने उठायी कानस और चाणक्य का जो लम्बा दाँत था वह घिस डाला। फिर अतिथि से पूछा : ''अब इसके लक्षण देखकर आप क्या कहते हैं ?''

अतिथि : ''अब चाणक्य राजा नहीं, लेकिन राजाओं को मार्गदर्शन देनेवाला, राजाओं का गुरु होगा।''

यह सुनकर चाणक्य के पिता के मन को शांति हुई।

हम भी नरक में ले जानेवाली मन की कामनाओं को घिस डालें, उनका नाश कर दें और मन के स्वामी बन जाएँ ताकि भोगों में घसीटने-वाला मन, सत्कर्म और सत्शास्त्रों के अभ्यास में लगकर सत्य-स्वरूप परमात्मा की प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील बन जाए।

> ***राजा अगर सावधानी नहीं रखता है तो भोगी बन जाता है और भोगी के लिये तो नरक है ही है। तपेश्वरी राजेश्वरी। राजेश्वरी भोगेश्वरी। भोगेश्वरी नरकेश्वरी। अतः नरक में ले जानेवाली मन की कामनाओं को घिस डालें, उनका नाश कर दें और मन के स्वामी बन जाएँ ताकि भोगों में घसीटनेवाला मन सत्कर्म और सत्शास्त्रों के अभ्यास में लगकर सत्यस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील बन जाए।***

> *किसी देश की उन्नति छोटे विचार के बड़े आदमियों पर नहीं, किन्तु बड़े विचार के छोटे आदमियों पर निर्भर है।*
>
> *- स्वामी रामतीर्थ*

दही

दही की प्रकृति (तासीर) गर्म होती है। इसमें प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है । दही जमने की प्रक्रिया में 'बी' विटामिन विशेषकर थायमिन, रिबोफ्लेबीन और निकोटेमाइड की मात्रा दुगुनी हो जाती है । विशेषत: दूध की अपेक्षा दही सरलता से पच जाता है ।

उच्च रक्तदाब, मोटापा तथा गुर्दे (किडनी) की बीमारियों में दही अत्यधिक लाभप्रद बताया गया है ।

अमेरिका के प्रो. जार्ज शीमान के अनुसार दही हृदयरोग की रोक-थाम के लिये उत्तम वस्तु है ।

कोलेस्ट्रोल नामक हानिकारक पदार्थ रक्तवाहीनियों में जमकर रक्त के प्रवाह को रोकता है । परिणामत: हृदय रोगों की उत्पत्ति होती है । दही कोलेस्ट्रोल की अधिक मात्रा को नियंत्रित करता है ।

विभिन्न रोगों में उपचार

केंसर : करनाल, २४ जुलाई १९७६ में राष्ट्रीय डेयरी संस्थान के वैज्ञानिकों ने काफी परीक्षणों के बाद बताया कि दही कई प्रकार के केंसर की सम्भावना को समाप्त करता है । दही का सेवन स्वास्थ्य के लिये उपयोगी है ।

वैज्ञानिकों के अनुसार दहीसेवन के एक घंटे के अन्दर ही उसके लगभग ८० प्रतिशत अंश को शरीर आत्मसात् कर लेता है जबकि दूध का सिर्फ ३२ प्रतिशत अंश ही शरीर आत्मसात् कर पाता है । दही से शरीर की फालतू चर्बी कम होती है अत: मोटापा कम करने के लिये भी दही या मट्ठे का सेवन लाभदायक है ।

बाल गिरना : आवश्यकता से अधिक भावनात्मक दबाव के कारण बाल अधिक गिरते हैं । महिलाओं में एस्ट्रोजन हारमोन की कमी के कारण बाल अधिक गिरते है । भोजन में लौह तत्त्व व आयोडीन की कमी से भी बाल असमय गिरते हैं ।

दही में वे सभी तत्त्व होते हैं जिनकी बालों को आवश्यकता रहती है ।

एक कप दही में पिसी हुई ८-१० काली मिर्च मिलाकर सिर धोने से सफाई अच्छी होती है । बाल मुलायम व काले रहते हैं एवं गिरना बन्द हो जाते हैं । कम-से-कम सप्ताह में एक बार इसी तरह बाल धोयें ।

अपच : सेंका व पिसा हुआ जीरा, काली मिर्च व सेंधा नमक दही में डालकर नित्य खाने से अपच ठीक हो जाता है । भोजन शीघ्र पचता है ।

सिरदर्द (आधे सिर में) : दही, चावल व मिश्री मिलाकर सूर्योदय से पहले खाने से सूर्योदय के साथ बढ़ने-घटनेवाला सिरदर्द ठीक हो जाता है । यह प्रयोग कम-से-कम छ: दिन करें ।

आँतें : वैज्ञानिकों के अनुसार एन्टीबायोटिक्स देने के पश्चात् आँतों के बेक्टीरियल फ्लोरा पर पड़े कुप्रभाव को दही के सेवन से हटाया जा सकता है ।

भाँग के नशे में : ताजा दही खिलाने से भाँग का नशा उतर जाता है ।

गंजापन : प्याज का रस सिर में लगायें । एक घंटे बाद खट्टा दही लगायें । पाँच-दस मिनट बाद सिर धो लें । इस प्रयोग से गंजे को भी बाल होने लगेंगे ।

विशेष : दही में मिश्री या शहद डालकर खाने से इसके गुणों में वृद्धि होती है ।

सावधानी : दमा, श्वास, खांसी, कफ, शोथ, पित्त, ज्वर में दही का सेवन हानिप्रद है ।

ईख (गन्ना)

आज कल अधिकांशत: लोग मशीन, ज्यूसर आदि से निकाला हुआ रस पीते हैं । 'सुश्रुत संहिता' के अनुसार यंत्र (मशीन, ज्यूसर आदि) से निकाला हुआ रस भारी, दाहकारी, कब्जकारक होने के साथ ही संक्रामक कीटाणुओं से युक्त भी हो सकता है ।

अविदाही कफकरो वातपित्त निवारण: ।
वक्त्र प्रहलादनो वृष्यो दन्तनिष्पीडितो रस: ॥

'सुश्रुत संहिता' के अनुसार दाँतों से दबाकर रस चूसने पर गन्ना दाहकारी नहीं होता और इससे दाँत मजबूत होते हैं । अत: गन्ना चूसकर खाना चाहिये ।

'भावप्रकाश निघण्टु' के अनुसार गन्ना रक्तपित्त नामक व्याधि को नष्ट करनेवाला, बलवर्धक, वीर्यवर्धक, कफकारक, पाक तथा रस में मधुर, स्निग्ध, भारी, मूत्रवर्धक व शीतल होता है । ये सब पके हुए गन्ने के गुण है ।

उपयोग : (१) गन्ना नित्य प्रात: चूसते रहने से पथरी टुकड़े-टुकड़े होकर निकल जाती है ।

(२) पित्त की उल्टी होने पर एक गिलास गन्ने के रस में दो चम्मच शहद मिलाकर पिलाने से लाभ होता है ।

(३) एक कप गन्ने के रस में आधा कप अनार का रस मिलाकर सुबह-शाम पिलाने से रक्तातिसार मिटता है ।

विशेष : लिवर की कमजोरीवाले, हिचकी, रक्तविकार, नेत्ररोग, पीलिया, पित्तप्रकोप व जलीय अंश की कमी के रोगी को गन्ना चूसकर ही सेवन करना चाहिये । इसके नियमित सेवन से शरीर का दुबलापन दूर होता है और पेट की गर्मी व हृदय की जलन दूर होती है । शरीर में थकावट दूर होकर तरावट आती है । पेशाब की रुकावट व जलन भी दूर होती है ।

निषेध : मधुमेह (डायबिटीज), पाचनशक्ति की मंदता, कफ व कृमि के रोगवालों को गन्ने के रस का सेवन नहीं करना चाहिये । कमजोर मसूढ़ेवाले, पायरिया व दाँतों के रोगियों को गन्ना चूसकर सेवन नहीं करना चाहिये । **मुख्य बात :** बाजारु मशीनों द्वारा निकाले गये रस से (यदि शुद्धतापूर्वक नहीं निकाला गया है तो) संक्रामक रोग होने की संभावना रहती है । अत: गन्ने का रस निकलवाते समय शुद्धता का विशेष ध्यान रखें ।

पायरिया

दाँतों का एक बहुत ही प्रचलित रोग है पायरिया । यह रोग आज की सभ्यता की देन है । डब्बों में बंद खाद्य पदार्थ, शक्कर, मैदा, पालिश वाले चावलों की ओर ज्यों-ज्यों हमारा आकर्षण बढ़ रहा है त्यों-त्यों इस रोग से आक्रांत लोगों की भी संख्या बढ़ती जा रही है ।

निवारण : भोजन में क्षार की मात्रा भी होनी चाहिये जो कि चोकरदार आटा, दूध, ताजे पके फल व हरी कच्ची तरकारियों में अधिक मात्रा में होता है । यदि इसका ध्यान रखा जाये तो यह रोग कभी भी होगा नहीं ।

कैल्शियम की कमी : अक्सर लोग कहा करते है कि चीनी खाने से दाँत खराब होते हैं । यह काफी अंशों में सही बात है । गन्ने के रस से जब चीनी बनती है, तो उसमें कैल्शियम (चूने) का अंश नहीं रह जाता और चीनी कैल्शियम के साथ बिना पचती नहीं । अत: चीनी के पाचन के लिये कैल्शियम हड्डियों से खिंचकर आता है । फलत: हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं । प्रभाव तो इसका शरीर के अन्दर हड्डियों के सारे ढाँचे पर पड़ता है किन्तु दाँत बाहर होने के कारण उसका प्रभाव उन पर प्रत्यक्ष दिखायी देता है । अत: दाँत के रोग समाप्त करने हैं तो भोजन में कैल्शियम की समुचित मात्रा होनी चाहिये जो कि हरी तरकारियों जैसे कि फूलगोभी, टमाटर, लौकी, गाजर, खीरा, पालक, नारंगी, तिल व दूध में अधिक मात्रा में पाया जाता है ।

दाँतों की कसरत : और अंगों की तरह दाँतों की कसरत भी आवश्यक है जो कि हलवा-पूरी खाने से नहीं, अपितु कच्ची तरकारियाँ खाने से अथवा

दोपहर-शाम मुट्ठीभर भिगोये हुए गेहूँ चबा लिया जाय तो दाँतों की पूरी कसरत हो जाये । अंकुरित गेहूँ और भी लाभप्रद हैं । अंकुरित गेहूँ में विटामिन 'ई' भी पैदा हो जाता है जो कि बाँझपन, नपुंसकता, गर्भपात हो जाना, जख्म जल्दी न भरना आदि रोगों में बहुत ही लाभप्रद है । यह प्रयोग कब्ज का भी नाश करता है ।

दाँतों की बीमारी के साथ-साथ जिन्हें मसूड़ों में भी तकलीफ रहती है वे विटामिन 'सी' प्रधान संतरा नींबू, टमाटर, पत्तागोभी, अननास, अंगूर आदि का भी सेवन करें ।

दाँत के लिए विशेष प्रयोग

जिनका रोग बढ़ गया है उन्हें अपने मसूड़ों पर नित्य कुछ दिन दस-पंद्रह मिनट तक भाप लगानी चाहिये । एक लोटे में थोड़ा पानी डालकर आग पर चढ़ा दीजिये । भाप निकलने लगे तो लोटे के मुँह पर एक चिलम उल्टी रख दीजिये । चिलम की नली से भाप निकलने पर इच्छित स्थान पर आप भाप ले सकतें हैं । भाप लेने के बीच दो-तीन बार ताजा जल से एक-दो कुल्ला करें । यदि चेहरे पर भाप लगे तो चिन्ता की कोई बात नहीं है ।

सुबह उठते समय व रात को सोने से पहले दाँत अवश्य साफ करें ।

बाजारु दवाएँ लगाकर दाँतों को निकम्मा न बनायें अपितु सेंधा नमक मिला सरसों का तेल अथवा नींबू का रस लगाना काफी होगा ।

भोजन के बाद मूली, गाजर, ककड़ी, सेव, अमरूद जैसी कोई कडी चीज का अवश्य सेवन करें । फल व तरकारियों का क्षार दाँतों को साफ करता है । इनका कोई अंश दाँतों में रह भी जाये तो इतना जल्दी नहीं सड़ता, जितना जल्दी पकी चीज का अंश सड़ता है । इस तरह यह प्रयोग करने से पायरिया की बीमारी तो समाप्त होगी ही, साथ ही दाँतों की पीड़ा, दाँतों का हिलना, मसूड़ों की खराबी आदि भी समाप्त हो जायेगी ।

❀

तेरे चाहनेवालों को ही चाहा करूँ

मन में तो बसी बस चाह यही ।
गुरु नाम तुम्हारा उचारा करूँ ॥
बिठला के तुम्हें मन मन्दिर में ।
मन मोहनी रूप निहारा करूँ ॥
भर के दिग पात्रों में प्रेम का जल ।
पद पंकज गुरुजी ! पखारा करूँ ॥
बनूँ प्रेम पुजारी तुम्हारी सदा ।
नित्य आरती अब उतारा करूँ ॥
तुम आओ ना आओ यहाँ तुमको ।
निश्वास से मैं ही बुलाया करूँ ॥
तेरे नाम की माला सदा हे गुरु !
मन के मनकों में फिराया करूँ ॥
जिस पथ में पग धरो हे गुरुजी !
पलकें उस पथ पे बिछाया करूँ ॥
भर लोचन की गगरी नित नित ही ।
पद पंकज पे ढुलकाया करूँ ॥
तुम जान अयोग्य बिसारो मुझे ।
सद्गुरु ! मैं ना कभी भुलाया करूँ ॥
गुन गान करूँ नित ध्यान करूँ ।
तुम माना करो मैं मनाया करूँ ॥
तेरे प्रेम पुजारियों की पग धूली ।
नित शीश सदा मैं चढ़ाया करूँ ॥
तेरे भक्तों की भक्ति करूँ मैं सदा ।
तेरे चाहनेवालों को ही चाहा करूँ ॥

- *गीता रावल*
जयपुर ।

संस्था-समाचार

बड़ेसरा : दिनांक : १६ से २० जनवरी तक पंचमहाल जिले के बड़ेसरा गाँव में संतशिरोमणि पूज्य बापूजी के कृपापात्र शिष्य सुरेशानंदजी के चार दिन के सत्संग समारोह के बाद पाँचवें दिन पूज्यश्री का सत्संग होगा, यह जानते ही ग्रामवासियों ने पूरे गाँव को सजाया और इस ६०० की बस्तीवाले छोटे-से गाँव में आसपास के अन्य इलाकों से आये साठ हजार भक्तों ने अगम-निगम के औलिया पू. बापू की अमृतवाणी का आस्वादन कर धन्यता का अनुभव किया । कहा जाता है कि छोटा-सा गाँव, ग्रामीण लोगों की बस्ती होने पर भी इतना विशाल आयोजन ! यह पूज्यश्री के विश्वव्यापी प्रेम और योगबल का ही चमत्कार है । आयोजन में इतनी भारी तादाद में एकत्रित श्रद्धालुओं को देखकर पत्रकार भी कह उठे :

''वाह ! बड़ेसरा, वाह !''

लुणावाड़ा : दिनांक : २० से २३ जनवरी तक पूज्य बापूजी का दिव्य सत्संग-समारोह पंचमहाल जिले के लुणावाड़ा नगर में संपन्न हुआ । वनवासी इलाके के इस छोटे-से नगर में भी पूज्यश्री की अमृतवाणी का रसपान करके हजारों-हजारों लोग धन्य हुए । लीमखेड़ा से आये हुए आदिवासी भाइयों ने वहाँ के पारंपरिक वस्त्र प्रदान कर पूज्यश्री का सम्मान किया । वेद, उपनिषद और गीता के कठिन रहस्यमय उपदेशों को पूज्यश्री ने ग्रामीण एवं आदिवासी लोग भी समझ सकें, ऐसी सरल शैली में, कभी करुण रस तो कभी विनोदी दृष्टांतों के द्वारा समझाया ।

वर्त्तमान युग में दूरदर्शन और अश्लील टी. वी. चैनलों द्वारा युवा पीढ़ी का व्यापक अधःपतन होने पर भी विभिन्न शालाओं के २० हजार छात्र-छात्राओं ने पूज्य बापूजी की अमृतवाणी का लाभ लिया । पूज्यश्री ने उनको मन के संयम, ब्रह्मचर्य की महिमा के द्वारा जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने, यादशक्ति बढ़ाने व शरीर सुदृढ़ करने के प्रयोग कराये । उन विद्यार्थी समुदाय के अभिभावक एवं श्रोतागण, विद्यार्थी उत्थान की इस सहज सरल शैली और पावन प्रयोगों को देख-सुनकर मन में महसूस करने लगे कि 'काश ! हमारे विद्यार्थीकाल में हमें ऐसा सत्संग मिला होता, ऐसे स्वानुभव से तृप्त संत मिले होते तो अभी की स्थिति से हम बहुत कुछ आगे होते ।' मानो, इस तरह उन श्रोताओं व विद्यार्थियों के अभिभावकों के मन में एक मधुर लालसा या मधुर ईर्ष्या जग रही थी ।

धनभागी हैं वे विद्यार्थी, उनके अभिभावक एवं शिक्षक-शिक्षिकाएँ, जो ऐसे ब्रह्मवेत्ता महापुरुष के सान्निध्य में उनके अमृतवचनों और आध्यात्मिक प्रयोगों का दिव्य प्रसाद पाकर उल्लसित, आनंदित और उन्नत होते हैं ।

धन की दक्षिणा तो पू. बापूजी कहीं भी लेते नहीं, फिर भी जनकल्याण की भावना से पूज्यश्री ने सत्संग की दक्षिणा के रूप में मदिरापान, धूम्रपान एवं पान-मसाला (गुटखा) के व्यसन से ग्रस्त लोगों से इन दुर्व्यसनों को छोड़ने का वचन माँगा । तब पांडाल में पूज्य बापूजी के इन प्रेरणाप्रद वचनों को सुनकर हजारों लोगों ने अपने दोनों हाथ ऊँचे करके इन दुर्व्यसनों को छोड़ने का वचन दिया । जो इन दुर्व्यसनों से मुक्त थे, उन्होंने पूज्य बापूजी को दक्षिणा में ध्यान-भजन बढ़ाने का वचन दिया ।

भूतपूर्व केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री एवं वर्त्तमान में गोधरा क्षेत्र के सांसद श्री शान्तिभाई पटेल, राज्य कक्षा के वित्त एवं राजस्व मंत्री श्री हरगोविंदभाई, गोधरा क्षेत्र के विधायक श्री गोपालसिंहजी सोलंकी, लीमड़ी क्षेत्र के विधायक श्री बच्चूभाई किशोरी, नगरपालिका अध्यक्ष श्री सुखपालसिंह सोलंकी, जिला पुलिस अधीक्षक श्री मनोज अग्रवाल, जिला विकास अधिकारी श्री पंकज जोशी एवं शहर के गणमान्य नागरिकों ने माल्यार्पण द्वारा पूज्यश्री का भावभीना स्वागत किया ।

नाथद्वारा : भगवान श्रीनाथजी की पावन तीर्थभूमि नाथद्वारा में विश्ववंद्य संत पूज्य बापूजी ने दिनांक : २५ से २७ जनवरी तक भगवान श्रीकृष्ण की अद्वितीय भगवद्गीता पर लोकभोग्य, सरल व सुगम

शैली में प्रवचन दिये । सत्संग के प्रथम दिन श्रीनाथजी मंदिर के मुखिया श्री नरहरि ठक्कर, विधायक श्री शिवदानसिंहजी, नगरपालिका अध्यक्ष श्री परमानंद पालीवाल ने माल्यार्पण कर पूज्यश्री का स्वागत किया ।

'नाथद्वारा तीर्थ क्षेत्र में पूज्य बापूजी का सत्संग होनेवाला है' ऐसा सुनते ही वहाँ दूर-सुदूर क्षेत्रों से श्रद्धालुगण आने लगे, जनसैलाब दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगा और सत्संग के दिन से समाप्ति तक मानो, श्रीनाथद्वारा कुंभ मेले की मौज-माधुर्य से छलकने लगा ।

डुँगरपुर : दिनांक : ३० जनवरी से २ फरवरी तक राजस्थान के बागड़ क्षेत्र के डुंगरपुर क्षेत्र पर भी ब्रह्मनिष्ठ संत पूज्य बापूजी की अनुपम कृपा की वृष्टि हुई ।

यहाँ लक्ष्मण मैदान पर बने विशाल सत्संग पांडाल में पूज्य बापूजी की जीवन उद्धारक वाणी का रसास्वादन करने के लिए भारी तादाद में दूर-दराज से उमड़े श्रद्धालुओं को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा :

''हरिनाम स्मरण से केवल शारीरिक स्वास्थ्य-लाभ ही नहीं, अपितु इससे आत्मशक्ति और प्राणशक्ति का भी विकास किया जा सकता है ।''

दिनांक : ३१ जनवरी के सुबह के सत्र के बाद पूज्यश्री ने 'रामरोटी अन्नक्षेत्र' भोजनशाला का उद्‌घाटन किया । इस अवसर पर पूज्य बापू ने कहा : **''गरीबों की लाचारी का लाभ उठाकर ईसाई मिशनरियों के प्रचारक धर्मपरिवर्तन कराते हैं । ऐसे मौके पर, ऐसी प्रवृत्तियों के द्वारा भी धर्मपरिवर्तन को रोका जा सकता है ।''**

दिनांक : १ फरवरी को विद्यार्थियों के लिए आयोजित विश्व सत्संग समारोह में जीवन्मुक्त संत पूज्य बापूजी ने भारतीय संस्कृति की गरिमा बतायी और योगासन, ध्यान के प्रयोगों के द्वारा स्मरणशक्ति व मनोबल बढ़ाने का मार्ग प्रशस्त किया ।

सत्संग की पूर्णाहुति के बाद पूज्य बापू ने एकान्तवास के लिए हिम्मतनगर आश्रम के लिए प्रस्थान किया । फिर भी एकान्त के निर्धारित समय को काटकर दिनांक : ९ फरवरी को अहमदाबाद की धर्मप्रेमी जनता को सत्संग से लाभान्वित किया । तत्पश्चात् रात को वायुयान द्वारा हैदराबाद के लिए प्रस्थान किया ।

हैदराबाद : विश्व में भारतीय संस्कृति की पताका को ऊँची फहरानेवाले राष्ट्रसंत पूज्य बापूजी ने दिनांक : १२ व १३ फरवरी को फुटबॉल ग्राउन्ड में आयोजित सत्संग समारोह का पान कराकर दिनांक : १३ फरवरी की शाम को वायुयान द्वारा रायपुर के लिए प्रस्थान किया ।

रायपुर : दिनांक : १६ फरवरी को वी. आई. पी. रोड़ पर, लव-कुश वाटिका स्थित नवनिर्मित आश्रम में मनुष्य जीवन में व्याप्त पाप, ताप, शोक, तनाव, वैमनस्य, विद्रोह, अहंकार आदि को दूर कर शांतिपूर्ण जीवनयापन हेतु मार्ग प्रशस्त करनेवाले, कुंडलिनी योग के आचार्य पूज्य बापूजी के वचनामृतों का श्रद्धालुगणों ने लाभ लिया ।

रायपुर शहर में पूज्य बापूजी का पदार्पण सन् १९९४ में हुआ था । गत तीन वर्षों से छत्तीसगढ़-वासियों के निरंतर आग्रह करने पर दिनांक : १९ से २३ फरवरी तक शंकरनगर के बी. टी. आई. महाविद्यालय के प्रांगण में श्री योग वेदान्त सेवा समिति के तत्त्वावधान में आयोजित पूज्य बापू के दिव्य सत्संग समारोह में, पुनः गीताज्ञान की पावन सरिता में लाखों श्रद्धालुओं ने अवगाहन कर धन्यता का अनुभव किया ।

दिनांक : २२ फरवरी को आयोजित विद्यार्थियों के लिए विशेष सत्र में स्वामी विवेकानंद, गांधीजी, नेपोलियन, मालवीयजी, छत्रपति शिवाजी, भक्त मीरा व प्रहलाद आदि के प्रेरक प्रसंग सुनाकर बच्चों में अध्यात्म, वीरता, बुद्धि-चातुर्य, पराक्रम व राष्ट्रप्रेम के भाव जाग्रत किये ।

दिनांक : २३ फरवरी को देश-विदेश से आये हुए हजारों पूनम व्रतधारियों ने पूज्यश्री का दर्शन व सत्संग श्रवण कर अन्न-जल ग्रहण किया । इस अवसर पर रायपुर क्षेत्र के विधायक व्रजमोहन अग्रवाल, जैन समाज के प्रमुख जी. सी. जैन, महापौर श्री बलवीर जुनेजा, मध्य प्रदेश खनिज मंत्री श्री सत्यनारायण शर्मा एवं नगर के सम्माननीय नागरिकों ने माल्यार्पण कर पूज्यश्री का स्वागत किया ।

श्री यो. वे. से. स. किल्ला पारडी (गुज.) द्वारा आयोजित विशाल संकीर्तन यात्रा।

पूज्य बापूजी

हमतो नाचेंगे-गायेंगे। हरिनाम में झूमेंगे झुमायेंगे॥ प्रभात फेरी में आनंदविभोर छोटी दमण-(गुज) का साधक वृंद।

श्री यो. वे. से. स. विक्रोली एवं श्री आसारामायण पाठ समिति द्वारा निकली प्रभातफेरी में हरिरस में सराबोर साधक।

डुँगरपुर में पूज्यश्री की अमृतवाणी का आस्वादन करने उमड़ा जनसमूह।

बड़ेसरा के एक दिवसीय सत्संग समारोह में उपस्थित भक्तसमुदाय

पूज्यश्री के मुखारविन्द से प्रस्फुटित पीयूषवाणी का रसपान करती लुणावाड़ा (गुज.) की धर्मप्रेमी जनता।

REGISTERED WITH R.N.I. UNDER NO. 48873/91 LICENSED TO POST W/O PRE-PAYMENT . AHMEDABAD PSO LICENCE NO. 307